बालसखा पुस्तकमाला—पुस्तक तेईसवीं।

बाल-भोजप्रबन्ध

अर्थात्

भोजप्रबन्ध का हिन्दी में सरल सार

लेखक

पण्डित सुन्दरलाल शर्मा, द्विवेदी

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९२१

संशोधित संस्करण]

[मूल्य ॥=)

Printed and published by Bishweshwar Prasad,
at The Indian Press Ltd , Benares-Branch

सूची

भूमिका



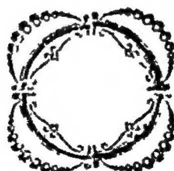
स्कृत में 'भोजप्रबन्ध' नामक एक पुस्तक है। इस पुस्तक का संस्कृतज्ञ अच्छा आदर करते हैं। राजा भोज का जन्म से लेकर अन्त तक इसमें वृत्तान्त है। यह राजा संस्कृत विद्या का जैसा आदर करने वाला हुआ है वैसा कोई दूसरा मनुष्य आज तक नहीं हुआ। इसने अपने राज्य में यहाँ तक आज्ञा दे दी थी कि जो संस्कृतज्ञ है वह, चाहे जिस जाति का हो, मेरे राज्य में आनन्दपूर्वक रहे और जो संस्कृत से अनभिज्ञ है—जो संस्कृत नहीं बोल सकता—वह चाहे मेरे कुटुम्ब का ही हो तो भी मेरे राज्य में नहीं रह सकता। ऐसे विद्याव्यसनी मनुष्य का कुछ हाल हिन्दी-पाठकों को भी मालूम हो सके इसी अभिप्राय से मैंने इस पुस्तक को लिखा है।

भोजप्रबन्ध बड़ी पुस्तक है। उसमें संस्कृत विद्या के चुटकुले अधिक हैं। वे चुटकुले संस्कृतज्ञों के लिये अधिक लाभदायक हैं। कहीं कहीं हमने कुछ श्लोक भी लिख दिये

हैं। हिन्दी पाठकों के लिए हमने इसमें से उपयोगी बातें लिख कर इस पुस्तक को समाप्त किया है। पूरे भोजप्रबन्ध का यह अनुवाद नहीं है। शृंगार-विषय को तो हमने बिल्कुल ही छोड़ दिया है।

इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों को बहुत सी उपयोगी बातें मालूम होंगी।

१९११ } सुन्दरलाल शर्मा, द्विवेदी।



बाल-भोज-प्रबन्ध

पहला परिच्छेद

राजा भोज का परिचय


चीन समय में इस आर्यावर्त्त देश में बडे बडे प्रतापी, तेजस्वी, धर्मधुरन्धर और अत्यन्त पराक्रमी अनेक राजा हो गये हैं। सूर्यवंश और चन्द्रवंश इन दोनों ही वंशों के राजा बडे बुद्धिमान् और परोपकारी थे। 'जो चढता है वही गिरा करता है' इस उक्ति के अनुसार पीछे से ऐसा समय आ गया कि इस देश की अत्यन्त हीन अवस्था हो गई। सब कला-कौशल और सब विद्यायें नष्ट हो गईं। लोगों ने पढना लिखना छोड दिया और

आपस में रात दिन लड़ाई झगडा करना अपना कर्त्तव्य समझ लिया।

जैसा राजा होता है प्रजा भी वैसी ही हो जाती है। जब राजा ही मूर्ख होने लगे तब प्रजा का तो कहना ही क्या था। राजाओं ने पढना लिखना छोड दिया, प्रजा ने उनसे भी पहले विद्या से अपने हाथ धो लिये। मतलब यह कि जिस राजा भोज का चरित हम लिखते हैं उसके समय से कुछ पूर्व इस देश की बुरी हालत हो गई थी। लोगों ने अपना धर्म-कर्म सब त्याग दिया था।

बारहवीं शताब्दी मे राजा भोज हुआ। वह स्वय बडा विद्वान् था। उसने जब देखा कि इस देश में मूर्खता छाई हुई है, मनुष्यों में मनुष्यत्व कुछ भी नही पाया जाता, तब उसने विद्या का प्रचार बढाने के लिए बडे बडे उपाय किये। उसने पढे लिखे मनुष्यों की बडी प्रतिष्ठा की। वह विद्या की उन्नति इतनी चाहता था कि विद्या के सामने वह अपने न्यायोपार्जित धन की कुछ भी पर्वा न करता था। एक एक श्लोक बनाने वाले को उसने लाखों रुपया देते हुए कुछ भी सकोच न किया। वह श्लोक बनाने वालों का बडा ही आदर करता था। वह चाहता था कि जैसे हो विद्या की उन्नति हो।

जहाँ कहीं विद्वान् मिले, उन्हे राजा भोज ने अपने पास बुलवाया। जब कोई आकर उससे कहता था कि अमुक स्थान का पण्डित बडा विद्वान् है तब वह तत्काल ही उसको अपने

पास बुलाने का उपाय किया करता था। उसने अपनी सभा में देश-देशान्तर के विद्वान् बुला कर रक्खे । उसने अपने राजनियमों मे एक ऐसा नियम बना दिया था, कि "मेरी राजधानी धारा नगरी मे एक भी मूर्ख न रहने पावे । चाहे लडका हो चाहे जवान, चाहे बूढा हो चाहे स्त्री या लडकी, कोई भी हो, हर एक मनुष्य को विद्या पढनी चाहिए। बिना विद्या के हमार राज मे कोई भी न रह सकेगा ।"

जहाँ राजा का इस तरह का कानून हो उस देश के सौभाग्य का कहना ही क्या है। जिस देश को सुधारने के लिए स्वय राजा ही इस तरह का उद्योग करे उस देश के सुधरने में कमी क्या रह सकती है । उस समय प्राय सभी मनुष्य मूर्ख थे । कोई अपना काम चलाने के योग्य मामूली पढे लिखे थे और कोई कोई अक्षरमात्र जानते थे। राजा भोज को जब अच्छी तरह मालूम हो गया कि हमारी प्रजा बिलकुल मूर्ख है, कोई भी पढा लिखा नहीं है तब उसने विद्या के पढने का सबको उपदेश दिया। उसने आज्ञा देदी कि मनुष्यमात्र को विद्या पढनी चाहिए।

यही नहीं कि राजा भोज ने कानून बना दिया हो—केवल यह आज्ञा ही दी हो कि सब को विद्या पढनी चाहिए, किन्तु उसने अपने रुपये से सैकडों विद्यालय बनवाये। उनमे देश-देशान्तर से ढूँढ ढूँढ कर अच्छे अच्छे विद्वान् अध्यापक रक्खे । पढने में जो असमर्थ थे—अपना कारोबार छोड कर

जो पढ नहीं सकते थे—उनको अपने रुपये से सहायता कर पढवाया ।

उस समय राजा भोज विद्या में सबसे बढ कर मा जाता था । उसकी विद्वत्ता जगद्विख्यात थी । उसकी धा नगरी राजा इन्द्र की अमरावती की तरह विबुध जनों अलङ्कृत और देदीप्यमान हो रही थी । सारे देश औ रजवाडों मे उसकी बडी प्रतिष्ठा थी । मनुष्य समझते थे ि धारा नगरी विद्या का भण्डार है । इसी लिए देश-देशान्त के विद्वान् वहाँ आते और अपनी विद्या का लाभ प्रा करते थे ।



दूसरा परिच्छेद

राजा भोज का जन्म और राजा सिन्धुल का वैराग्य

महाराजा विक्रमादित्य परमार के वंश में सिन्धुल नामक एक राजा हुआ। यह उज्जयिनी नगरी में राज्य करता था। इसका ध्यान प्रजा को सुखी रखने का सदा रहता था। उसकी यह इच्छा रहती थी कि हमारी प्रजा को किसी तरह का दुख न हो। इसी लिए इसकी प्रजा बड़े सुख में रहती थी और राजा से सदा बड़ी प्रसन्न रहती थी। प्रजा सदा इसके अभ्युदय को चाहती थी। प्रजा के सन्तुष्ट रहने से यह भी बड़ा सुखी रहता था। इसको किसी प्रकार का दु:ख न था। प्रजा की ओर से यह सदा निर्भय रहता था। अगर इसको कोई दुख था तो वह केवल पुत्र के न होने का था। पर यह दुख कुछ मामूली न था किन्तु बहुत बड़ा था। उसे रात दिन यही चिन्ता रहा करती थी कि क्या करूँ, जिस से पुत्र का दर्शन हो। क्योंकि 'बिना पुत्र के मनुष्य की गति नहीं होती'। होते होते उसको

वृद्धावस्था ने भी आकर घेर लिया। बुढापे में तो और भी अधिक पुत्र की इच्छा हुआ करती है। मतलब यह कि उसको बुढापे तक पुत्र के न होने का दुख रात दिन पीडित करता रहा।

सच है, मनुष्य के करने धरने से कुछ नहीं होता। जो प्रारब्ध मे है वही समय पाकर मिलता है। यह भी ठीक है कि केवल भाग्य के भरोसे पर ही मनुष्य को नहीं रहना चाहिए किन्तु उपाय भी करना चाहिए। उपाय करने पर भाग्य भी अपना जोर लगाता है। यदि उपाय नहीं किया जाता तो भाग्य भी किसी किसी अवसर पर दबा रहता है। मतलब यह कि सिन्धुल राजा पुत्रप्राप्ति की चिन्ता में सदा रहता ही था। अन्त मे राजा के भाग्य ने पलटा खाया। बुढापे मे उसे पुत्र-लाभ का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पुत्र-जन्म सुन कर राजा को उस समय जो सुख मिला होगा वह लिखने मे नहीं आ सकता। जिसकी चिन्ता मे सारी उम्र बीत जावे, तिस पर भी लडके के लिए, और बुढापे मे उसकी प्राप्ति हो तो इस सुख का अनुभव उसी को हो सकता है, जिसको कि यह सुख मिला करता है। अभिप्राय यह कि पुत्र का जन्म सुन कर राजा को अभूतपूर्व सुख मिला।

राजपुत्र का जन्म सुन कर प्रजा को भी बडा सुख हुआ। प्रजा ने जहां तहाँ बडे बडे उत्सव किये। राजा के अच्छे वर्त्ताव से प्रजा सन्तुष्ट तो थी ही। फिर भला उसको

राजकुमार का जन्म सुन कर अत्यन्त आनन्द क्यों न होता। उसने उसी तरह आनन्द मनाया जिस तरह राजघराने में मनाया गया था।

राजा ने पुत्रजन्म की खुशी में बडे बडे दान-पुण्य किये। जो कोई उस समय दरवाजे पर आया उसी को यथेच्छ धन आदि पदार्थ दे कर सन्तुष्ट किया। जो जिसके योग्य था उसको वही चीजें दी गईं। वे लोग बडे सुखी हुए और बडे आनन्द के साथ पुत्र को आशीर्वाद देते हुए उसकी दीर्घायु के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करने लगे। सब ने यही चाहा कि राजकुमार की बडी उम्र हो। यह ऐश्वर्यशाली हो और संसार में बहुत दिन तक जी कर राजकार्य करे।

पुत्र जन्म होने पर एक दो दिन के बाद राजा ने अपने राज्य के ज्योतिषियों को बुलवा कर कहा कि आप लोग मेरे पुत्र का जन्मपत्र तैयार कीजिए। उन्होंने आज्ञा पाकर पुत्र की जन्मलग्न देखी और गणित लगा कर जन्मपत्र बनाकर तैयार कर दिया। जब जन्मपत्र तैयार हो चुका तब राजा से ज्योतिषियों ने कहा कि राजन्! गणित से हमको मालूम हुआ है कि राजकुमार की उम्र अधिक होगी। जब यह बडा होगा तब महायशस्वी होगा। इसकी संसार में बडी प्रतिष्ठा होगी। इसके राज्य में कोई भी मनुष्य बिना पढा लिखा न रहेगा, सब लोग पढने लिखने में उद्योग करेंगे। इसकी प्रजा भी बडी बुद्धिमती होगी। इसके राज्य में विद्या का और

कला-कौशल का खूब प्रचार होगा। सब लोग विद्वान् और दस्तकारी जानने वाले होंगे। यह चक्रवर्ती राजा होगा। लोग इसको महाराज कहेंगे और यह बडे सुख से राज्य करेगा।

ये सब बातें होते हुए भी गणित से मालूम होता है कि बालकपन मे एक दुख इसको भोगना पडेगा। वह दुख बहुत बडा न होगा। वह जाहिरा तो बडा दुख मालूम होगा पर उसका परिणाम बुरा न होगा। उस दुख को भोगने मे बहुत दिन न लगेंगे। थोडे ही दिनो मे उस दुख के बाद यह सुख से रहेगा और अच्छी तरह राज-कार्य करेगा। मनुष्य को सुख-दु ख कर्मानुसार हुआ करता है, इसलिए इसकी चिन्ता करना व्यर्थ है। आप इसका विशेष दु ख न मानें। जब कि दु ख-सुख का होना कर्मानुसार है तब उसको मेट ही कौन सकता है। इसलिए आपको किसी प्रकार का रज नहीं करना चाहिए।

राशि के अनुसार इसका नाम भकारादि होता है। हमारी राय में आप इसका नाम **भोज** रक्खें तो अच्छा हो। यह सब जन्मपत्र का हाल कह कर ज्योतिषी लोग चुप हो गये। अन्त मे राजकुमार का नाम भोज ही रक्खा गया।

राजा सिन्धुल समझदार था। उसने विचार किया कि जो होनहार है वह अवश्य होता है। भावी को कोई भी दूर नहीं कर सकता। ऐसा कोई भी उपाय नहीं है जो भावी को दूर कर सके। इसलिए राजा ने अपने मन मे धैर्य

धारण किया। सब ज्योतिषियों को उनकी योग्यता के अनुसार दक्षिणा दे बिदा किया।

राजकुमार भोज के दुःख का हाल ज्योतिषियों ने जो राजा को बतलाया था उसकी उसे रात दिन फिक्र रहती ही थी। ईश्वर की कृपा से धीरे धीरे भोज को पाँच वर्ष बीत गये। उसको किसी तरह का दुःख न हुआ। जब राजा ने देखा कि अब तो राजकुमार ५ वर्ष का हो गया और इसको किसी प्रकार की तकलीफ नहीं हुई तब उसके मन को कुछ कुछ सन्तोष हुआ। अब धीरे धीरे राजा को बुढापा घेरता गया। उम्र अधिक हो ही गई थी और चिन्ता भी अधिक करनी पड़ी। इसलिए राजा के मन में विचार पैदा हुआ कि सांसारिक कार्यों को छोड कर कुछ दिन परमात्मा का भी भजन करना चाहिए। परमात्मा का भजन किये बिना मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता। इस तरह उसे संसार की ओर से बिलकुल उदासीनता हो गई। धीरे धीरे सांसारिक कार्यों को छोड देने का उसने पक्का विचार कर लिया।

पुराने जमाने में हमारे आर्यावर्त्त देश की चाल थी कि क्या राजा क्या रङ्क सभी, वृद्धावस्था आते ही, अपने अपने घर का कारोबार छोड कर वन को चले जाते थे। वे वहाँ जाकर ईश्वर का भजन करते थे और घर का सब प्रबन्ध पुत्र किया करते थे। तदनुसार राजा सिन्धुल ने, वृद्धावस्था होने पर, वन में जाकर परमेश्वर का भजन करने का विचार किया।

तीसरा परिच्छेद

मुञ्ज को राजगद्दी

अब राजा सिन्धुल ने अपने मन में पूरा वैराग्य कर लिया। उन्होंने राज्यभार दूसरे मनुष्य को देना सर्वथा निश्चित कर लिया। राजा सिधुल के एक भाई भी था। उसका नाम मुञ्ज था। जब राजा ने वन में जाकर तपस्या करने का पक्का विचार कर लिया तब अपने मुख्य मुख्य मन्त्रियों को बुलवाया। उसने मन्त्रियों से कहा कि अब मैं बूढा हो गया हूँ, अब मेरे ऊपर राज-भार न रहे तो अच्छा है। अब मेरी इच्छा है कि मैं वन में रह कर कुछ दिन तप करूँ, जिससे मेरा परलोक सुधरे। आप लोग बतलाइए कि अब मैं क्या करूँ? राज-कार्य कौन कर सकता है? मेरा छोटा भाई मुञ्ज बडा बली है और मेरा लडका भोज निपट बालक है। भाई मुञ्ज राज-काज सँभालने के योग्य है। उसमें इतनी शक्ति है कि वह राज को चला सके। यदि मैं मुञ्ज को राज्य न देकर अपने लडके को राजा बनाऊँ तो एक तो यह डर है कि संसार में लोग निन्दा करेंगे कि राजा ने भाई को समर्थ होते हुए छोड कर असमर्थ लडके

को राजा बनाया। दूसरा यह भी डर है कि मुञ्ज राज्य के लोभ से जहर दे कर कहीं लडके को मरवा न डाले। यदि दैवगति से ऐसा हो गया, यह अनर्थ मुञ्ज से बन पडा तो इस राज्य का भोज को देना व्यर्थ होगा और वंश का नाश भी हो जावेगा। क्योंकि नीतिकारों ने कहा है—

"लोभ पाप की जड है। लोभ से ही पाप की उत्पत्ति होती है। लोभ ही वैर और क्रोध आदि अवगुणों को पैदा करने का मूल कारण है।

"लोभ से क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध से द्रोह—ईर्ष्या—बढता है। द्रोह करने से शास्त्र का जाननेवाला पण्डित भी नरक पाता है।

"जब मनुष्य को लोभ घेर लेता है तब वह आगा-पीछा कुछ भी नहीं देखता। उसको धर्म-कर्म का कुछ भी खयाल नहीं रहता, किन्तु वह माता, पिता, पुत्र, भाई, मित्र, स्वामी और सहोदर भाई तक को मारने के लिए तैयार हो जाता है, कभी कभी मार भी डालता है"।

यह सब विचारते हुए मैं उचित समझता हूँ, और यही ठीक मालुम होता है कि मैं मुञ्ज को राज्य देकर भोज को उसे सौंप दूँ। ऐसा करने से वंश का नाश भी न होगा और मुञ्ज बडा लोभी है सो वह भी खुश रहेगा। जब भोज बडा हो जायगा और उसमें राज्य करने का सामर्थ्य हो जावेगा तब वह अपने आप उससे राज्य ले लेगा।

राजा के प्रधान मन्त्री वुद्धिसागर ने यह सव हाल सुनकर राजा से कहा आपका विचार ठीक है। आपको ऐसा ही करना चाहिए। ऐसा ही करने से राज्य का काम ठीक ठीक चल सकेगा, नहीं वो उत्पात होने का डर है।

अव राजा ने अपने भाई मुञ्ज को वुलवाया। उसके आने पर राजा ने कहा कि भाई मुञ्ज! राज्य का समस्त भार मैं तुमको सौंपता हूँ। इसको तुम अच्छी तरह से चलाओ। यह मैं अपना पुत्र भोज भी तुमको सौंपता हूँ। यह पुत्र वहुत छोटा है। इसकी रक्षा करनेवाले तुम्हीं हो। जव यह वडा हो जावे तव इसका राज्य तुम इसको दे देना और तुमको जो गाँव राज्य की ओर से मिले हुए हैं उनका कारोवार सँभालना।

मुञ्ज ने राजा का कहना अच्छे प्रकार सुना और सव कुछ स्वीकार किया। थोडे दिन के वाद राजा सिन्धुल स्वर्ग को सिधार गये। राजा के मरने पर सारे राज्य में और राजभवन मे शोक छा गया। सव लोगों ने राजा के मृतक शरीर का श्मशान-भूमि मे अग्निसस्कार किया और घर लौट आये। राजा के मरने वाद की जव सव और्ध्वदैहिक क्रियायें हो चुकी तव मन्त्रियों ने और राजघराने के लोगों ने वडे ठाट-वाट के साथ मुञ्ज को राजसिंहासन पर वैठाया। मुञ्ज का राजतिलक हो गया।

राजा मुञ्ज वडा लोभी एव स्वार्थी था। उसको अनायास

ही राज्य मिल गया, इसलिए वह बड़ा प्रसन्न हुआ। अब उसने अपनी हाँ में हाँ मिलानेवाले नौकरों को ढूँढना आरम्भ किया। जो पुराने नौकर थे और राज्य में प्रधान कार्यकर्त्ता माने जाते थे उनमें से उसने अपने अनुकूल नौकरों को रहने दिया और बाक़ी को नौकरी से बर्ख़ास्त कर दिया। उनकी जगह नये नये नौकर नियत किये। जब पुराने नौकर निकाले गये और नये नये रक्खे गये तब पहले तो प्रजा में ख़ासी हलचल मची किन्तु कुछ समय के बाद शान्ति हो गई।

नये नये राजकर्मचारी और अधिकारी अपनी इच्छा के अनुसार प्रजा को सताने लगे। उनको जैसा अच्छा मालूम हुआ वैसा ही उन्होंने प्रजा को दुख दिया। प्रजा की पुकार पर राजा ने कुछ भी ख़याल न किया। इस तरह कुछ समय बीता।



चौथा परिच्छेद

भोज का विद्याध्ययन और उसे मारने का उपाय

जब राजकुमार भोज की अवस्था सात वर्ष की हुई तब राजा मुञ्ज ने उसको विद्या पढाने का विचार किया। उसके लिए अलग एक पाठ-शाला नियत की गई और अच्छे अच्छे अध्यापक रक्खे गये। भोज का यज्ञोपवीत किया गया—और उसको विद्या पढाने की आज्ञा दी गई। भोज की उस समय उम्र कम थी तो भी वह विद्या पढने मे बडा ध्यान लगाता था। उसको जो कुछ पढाया जाता था उसे वह अच्छी तरह समझ कर याद कर लेता था। उसका बर्त्ताव और चतुरता देख कर पढाने-वाले उसके आचरण की और बुद्धि की बडी प्रशसा किया करते। वे लोग उससे बडे प्रसन्न रहते। कैसा ही पाठ मुश्किल हो पर भोज अच्छी तरह समझ कर याद कर डालता था। इस तरह थोडे दिनों में उसने विद्या, कला, मन्त्र, तन्त्र, आदि

विषयों में सर्वाङ्ग-पूर्णता प्राप्त कर ली । वह कई विद्याओं को अच्छी तरह जान गया ।

एक दिन राजा मुञ्ज उस पाठशाला को देखने गया जिसमें भोज पढ़ता था । उस वक्त भोज की उम्र बारह तेरह वर्ष की हो चुकी थी । मुञ्ज ने भोज से बातचीत की । बातचीत से मालूम हुआ कि वह तो हर एक बात मे बड़ा होशियार हो गया है । उसके अपूर्व चातुर्य को देख मुञ्ज ने सोचा कि इस थोड़ी उम्र में तो इसकी यह दशा है, यह इतना चतुर हो गया है, जब यह बड़ा होगा तब मुझसे अपना राज्य जरूर छीन लेगा । इसलिए इसका कुछ उपाय अभी से किया जावे तो ठीक है । लोकनिन्दा से डरना ठीक नहीं । अगर मैं लोक-निन्दा का खयाल करूँगा तो जरूर पीछे पछताना पड़ेगा । मैं जो कुछ करना चाहूँगा वह अवश्य ठीक हो जावेगा । जब तक यह छोटा है तभी तक कुछ उपाय चल सकता है । बड़ी उम्र होने पर कोई उपाय काम न देगा ।

इस तरह विचार करते करते कई दिन बीत गये । मुञ्ज को न रात को नींद आती थी, न दिन को भूख लगती थी । वह यही सोचा करता था कि अब क्या उपाय करना चाहिए । मुञ्ज एक दिन अपनी सभा मे इसी शोकसागर में डूबा हुआ बैठा था । राजपुरोहितों से तो वह राजकुमार भोज के भाग्य का हाल पहले ही पूछ चुका था । उस दिन सभा में अकस्मात् एक ब्राह्मण आगया । वह बड़ा अच्छा ज्योतिषी था । ज्योतिष

शास्त्र का उसने अच्छी तरह अध्ययन किया था। और विद्याओं का भी उसने अभ्यास किया था। उस पण्डित ने आते ही कहा कि 'राजा के लिए कल्याण हो।' वह इस तरह आशीर्वाद देकर बैठ गया। बैठ कर कहने लगा कि हे देव! संसार मुझको सर्वज्ञ—सब कुछ जानने वाला—कहा करता है, इसलिए आप भी मुझ से कुछ पूछिए। क्योंकि विद्वान् का काम है कि अपनी विद्या का सदा दूसरो मे प्रकाश करता रहे। जो विद्या गुरु मे तथा पुस्तक में होती है उससे मूर्ख मनुष्य रोका जाता है—मूर्ख के पास विद्या जाती ही नहीं, उससे सदा दूर रहती है।

इस तरह पण्डित ने जब राजा से कहा तब राजा भी उसकी घमंड-भरी बातें सुन कर बोला कि मैंने जन्म से लेकर आज तक जो जो काम किये हों और जैसे जैसे आचरण किये हों उन सबको यदि आप कह सकें तो आप अवश्य सर्वज्ञ हैं। यह सुन कर ब्राह्मण ने राजा का कुल हाल बतला दिया, जो जो काम राजा ने किये थे तथा जो कुछ उसके गुप्त भेद थे, सब कह सुनाये। उस ब्राह्मण की सर्वज्ञता जान कर राजा बड़ा खुश हुआ और उसके चरणों में गिर गया। फिर इन्द्र-नीलमणि तथा पुष्पराज आदि मणियों से जड़े हुए अपने सिंहासन पर पण्डित को बैठाया और कहा—

"विद्या माता की नाईं मनुष्य की रक्षा करती है, पिता की तरह अच्छे अच्छे कामो में लगाती है, अपनी स्त्री की

तरह थकावट दूर करके सुख देती है, चारों ओर कीर्ति फैलाती है और लक्ष्मी को बढ़ाती है। विद्या कल्पवृक्ष की लता की तरह मनुष्य के कौन कौन काम सिद्ध नहीं करती? अर्थात् संसार के जितने काम हैं वे सब विद्या से ही ठीक बनते हैं। बिना विद्या के कोई काम ठीक ठीक सिद्ध नहीं होता।

ऊपर कही हुई विद्या की महिमा सुन कर राजा ने उस ब्राह्मण को अच्छी जाति के दस घोड़े दिये। राजा की सभा में बुद्धिसागर नामक मंत्री बैठा हुआ था। उसने राजा से कहा कि देव! इस पंडित से भोज की जन्मपत्री के विषय में पूछिए। तब राजा मुञ्ज ने ब्राह्मण से कहा कि भोज की जन्मपत्री विचारिए। ब्राह्मण ने कहा कि भोज को मेरे पास बुलाइए। तब राजा ने सर्वाङ्गसुन्दर भोज को अपने एक शूरवीर नौकर द्वारा पाठशाला से बुलवाया। भोज आया और अपने पिता की नाईं मुञ्ज को विनयपूर्वक प्रणाम करके खड़ा हो गया। भोज की छवि देख कर सभा के सब मनुष्य मोहित हो गये। उनको ऐसा मालूम होने लगा मानो भूमण्डल पर राजा इन्द्र आ गया है और कामदेव ने तथा सौभाग्य ने मानो शरीर धारण किया है।

उस पण्डित ने भोज को देख कर राजा मुञ्ज से कहा कि हे राजन्! भोज का भाग्योदय कहने में ब्रह्मा भी समर्थ नहीं हैं। ब्रह्मा भी नहीं बतला सकते हैं तो भला मैं एक छोटा सा ब्राह्मण क्योंकर कह सकता हूं? फिर भी अपनी बुद्धि के

अनुसार कुछ अवश्य कहूँगा। अब आप इसको यहाँ क
पाठशाला मे भेज दीजिए। राजा की आज्ञा से भोज पाठशाल
को चला गया। फिर ब्राह्मण ने कहा—

"पचपन वर्ष, सात महीने, और तीन दिन तक राजकुमा
भोज राजा बनकर बगाल देश सहित दक्षिण देश क
राज्य करेगा।"

इस तरह उस पण्डित की बातें सुनकर राजा मुञ्ज
अपनी चतुराई से मुसकुराता रहा तथा अपने मुँह की कान्ति
भी बनाए रहा, तो भी उसका मुँह सुस्त मालूम होने लगा
थोड़ी देर बाद ब्राह्मण को राजा ने विदा कर दिया। आधी
रात को अपनी चारपाई पर पडा हुआ मुञ्ज सोचने लगा कि
अगर राजलक्ष्मी भोज को मिल गई तो मैं जीता हुआ भी मर
के समान हो जाऊँगा। क्योंकि—

जब मनुष्य के पास धन नहीं रहता तब उसकी बुद्धि
काम नहीं देती। धन की गर्मी न रहने पर मनुष्य कुछ का
कुछ मालूम होने लगता है। उसकी इद्रिया उसके पास पूर्ववत्
रहती हैं पर जब धन नहीं रहता तब वे कुण्ठित हो जाती हैं,
कुछ काम नहीं कर सकतीं। उस मनुष्य के शरीर के साथ
सम्बन्ध रखने वाली सब बातें बनी रहती हैं पर सिर्फ धन न
रहने से उस वक्त उसकी कोई भी बात काम नहीं करती।
यह बडा आश्चर्य है। और—

जो कार्यसिद्धि में अपने शरीर तक की पर्वा नहीं करता,

जो चतुर है, जो अपने मन मे प्रत्येक कार्य का ठीक ठीक निश्चय कर लेता है और जो बुद्धि से विचार कर कामो को शुरू करता है उसके लिए समार मे कोई काम मुश्किल नहीं। वह सभी काम आसानी से कर सकता है।

जो दूसरो के गुणो की कभी बुराई नहीं किया करता तथा अपने सब काम उपाय विचार कर करता है उसकी आज्ञा का पालन मित्र और मत्री आदि सब अच्छी तरह किया करते हैं।

इसलिए आज मेरे लिए कोई काम मुश्किल नहीं है। मैं सब काम अच्छी तरह कर सकता हूँ। क्योंकि—

जो सब कामो को चतुरता से करता है, और प्रत्येक काम को तर्क-वितर्क के साथ किया करता है तथा दूसरों की बुराई से जो सदा डरता रहता है उसको दूर से ही सपत्ति मिला करती है। और—

जो लेने के योग्य और देने के योग्य तथा करने योग्य काम हैं उनको जल्दी ही कर डालना चाहिए, नहीं तो उनके रस को काल पी जाता है—अधिक वक्त हो जाने पर फिर वे काम ठीक ठीक नहीं होते।

चतुर मनुष्य को चाहिए कि अपमान को आगे करे और मान को पीठ पीछे करके अपना काम बना ले। काम का बिगाड देना मूर्खता कहलाती है। वक्त पर काम ठीक हो जाना चाहिए। मान और अपमान का कुछ भी खयाल न करना चाहिए।

बुद्धिमान् को चाहिए कि थोडे से काम के लिए बहुत को (धन आदि पदार्थों को) वरबाद न कर दे। बुद्धिमत्ता यही है कि थोडे काम से बहुत काम बना ले।

जो पैदा होते ही शत्रु या बीमारी को शान्त नहीं कर देता वह बडा मजबूत होने पर भी उस शत्रु या बीमारी से मारा जाता है।

जो अपनी रक्षा बुद्धि द्वारा कर लेता है उसका शत्रु कुछ नहीं कर सकते—जिस तरह जो मनुष्य हाथ मे छतरी लिए हुए है उसको जल की धारा नहीं भिगो सकती। और—

जिनसे कुछ नतीजा न निकले, जो बडी मुश्किल से बन सकें, जिन मे नफा-नुकसान बराबर हों और जिनके तैयार करने में बडी बडी कठिनाइयाँ उठानी पड़ें ऐसे कामो को पण्डित—चतुर—मनुष्य आरम्भ ही नहीं करते।

इस तरह सोच विचार करते हुए मुञ्ज राजा ने दिन के तीसरे पहर अकेले ही मे सलाह की और अपना एक सेवक दूत वगदेश मे महावली राजा वत्सराज को बुलाने के वास्ते भेजा। उस दूत ने जाकर राजा वत्सराज से कहा कि आपको राजा मुञ्ज बुलाते हैं। यह सुन कर वह राजा मय अपने कुटुम्बी मनुष्यो के रथ पर सवार होकर आया। वह राजा को प्रणाम करके बैठ गया। राजा मुञ्ज ने उसी वक्त अपनी कचहरी वरखास्त कर दी। उसने वत्सराज से कहा—

राजा जब अपने नौकर से खुश हो जाता है तव

सिर्फ उसका सत्कार किया करता है, और सत्कार पाया हुआ नौकर उस राजा का अपने प्राणों तक से उपकार किया करता है। अब तुम आज रात को भोज को भुवनेश्वरी वन में ले जाना और वहाँ पर इसको मार कर इसका सिर जनाने महल में ले आना। यह सुन वत्सराज खड़ा हो गया और प्रणाम करके राजा से कहने लगा—

हे राजन्! मैंने आपकी आज्ञा स्वीकार कर ली। किन्तु मुझ पर आप प्रेम किया करते हैं इसलिए मैं कुछ कहना चाहता हूँ। कहने में शायद अपराध हो जावे तो क्षमा कीजिएगा। बात यह है कि भोज के पास न तो धन दौलत है, न सेना है और न उसका कुटुम्ब ही बलवान् है। वह तो अत्यन्त गरीब की तरह रहता है। हे प्रभो! भोज में किसी तरह का सामर्थ्य नहीं है फिर वह मारने के योग्य क्यों ठहराया गया? वह सिर्फ अपना पेट ही भर लिया करता है। वह सदा आपके चरणों में आसक्त रहता है। हे राजन्! इन कारणों से मैं भोज के मार डालने में कोई विशेष कारण नहीं समझता। इतना कह कर वत्सराज चुप हो गया। तब राजा ने प्रात काल ज्योतिषी से सुना हुआ सारा वृत्तान्त कह सुनाया। फिर उससे वत्सराज हँसता हुआ कहने लगा—

रामचन्द्रजी तीनों लोकों के स्वामी हुए हैं और वशिष्ठ ब्रह्मा के पुत्र थे। उन्होंने भी राज्यतिलक के लिए मुहूर्त्त का निश्चय किया था। पर हुआ क्या कि उस मुहूर्त्त ने रामचन्द्र-

जी का राज्यतिलक न होने दिया किन्तु उनको वन जाना पड़ा, सीता का हरण हुआ और वशिष्ठ का वचन झूठा हो गया। हे राजन्! न जानने के बराबर कुछ जानने वाला और अपना पेट भरने वाला यह ब्राह्मण कौन है जिसके कहने पर आप अत्यन्त खूबसूरत सुकुमार बालक को मरवाना चाहते हैं? यह ब्राह्मण मुझे मूर्ख प्रतीत होता है। आप इसके कहने में आकर इतना अनर्थ क्यो करना चाहते हैं?

'इस काम के करने से क्या नतीजा निकलेगा और न करने से क्या फल होगा' यह अच्छी तरह सोच विचार कर बुद्धिमान् मनुष्य उस काम को करे या न करे। चतुर मनुष्य काम का फल विचार कर काम शुरू किया करते हैं। बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि पहले यह अच्छी तरह से सोच ले कि यह काम करने योग्य है या नहीं और इसका क्या फल होगा। जो काम विना विचारे जल्दी से किये जाते हैं उनका नतीजा अच्छा नहीं होता। वे सदा काँटे के समान हृदय मे चुभने वाले और दुख देने वाले होते हैं। आप पहले अच्छी तरह विचार लीजिए कि इस अनर्थ के करने से क्या फल होगा। मेरी राय में आपको पीछे पछताना पड़ेगा। और देखिए—

जिसके साथ बैठना-उठना, खाना-पीना, हँसना-खेलना, बोलना होता है और जिसका बहुत विश्वास किया जाता है उसके साथ बुरे मनुष्य का भी—मूर्ख का भी—मरण पर्यन्त मेल बना रहता है, उसके साथ कभी बिगाड़ नहीं होता।

दूसरी बात यह कि इस भोज के मरवा देने से बुड्ढे सिंधुल राजा के जो बडे प्रेमपात्र शूरवीर हैं और जो इस समय तुम्हारी आज्ञा में चलते हैं वे सब तुम्हारे नगर को इस तरह बरबाद कर देंगे जिस तरह बडे बादलों की प्रबल घटा बरस कर नगर को डुबो कर नष्ट कर देती है। यद्यपि बहुत दिन से तुम्हारी जड मजबूत हो रही है तो भी शहर के रहने वाले विशेष कर भोज को ही राजा मान रहे हैं, तुम को नहीं।

यह भी ठीक ही है कि मनुष्य कार्य तो अच्छे करता हो पर बुरी नीति को काम में लाता हो तो वह कुनीति लक्ष्मी की शोभा को नष्ट कर देती है, जिस तरह हवा दिये की ज्योति को, तेल से अच्छी तरह भींगी होने पर भी, बुझा देती है।

इन नीति के वचनों से मालूम होता है कि हे राजन्! पुत्र का मारना किसी तरह ठीक नहीं है। वत्सराज की बातें सुन कर राजा मुञ्ज को बडा गुस्सा आया। वह बोला कि राजा तो तूही है, तू सेवक नहीं है। क्या तू ने नीति का वचन नहीं सुना कि—

स्वामी की कही हुई बात को जो पूरा नहीं करता वह नौकर सब नौकरों से नीच समझा जाता है। उस नौकर का जीना भी इस तरह व्यर्थ है जिस तरह बकरी की गर्दन में थन व्यर्थ होते हैं।

मुञ्ज ने जब इस तरह कहा तब वत्सराज ने अपने मन में विचार किया कि जैसा समय हो वैसा ही विचार कर कार्य

करना चाहिए। इस तरह समझ कर वह चुप हो रहा। इसके बाद जब सूर्य छिपने लगा तब वह वत्सराज गुस्से में भरा हुआ ऊँचे महल से उतरा। उसको यमराज की तरह आता हुआ देख कर, इकट्ठे हुए सब सभासद डर गये और अनेक बहाने करके अपने अपने घर को चले गये। फिर वत्सराज ने अपने घर की रक्षा के वास्ते बहुत से नौकर भेज दिये। और अपना रथ ले जाकर भुवनेश्वरी देवी के मन्दिर के सामने खड़ा कर दिया, फिर एक नौकर से कहा कि तुम उस पण्डित को बुला लाओ जो भोज को पढाया करता है। नौकर ने जाकर पण्डित से कहा कि तुमको वत्सराज बुलाता है। उस नौकर ने पण्डित का हाथ पकड़ लिया और ले चला। इस प्रकार अचानक बुलाये जाने से पण्डित ने मन में सोचा कि क्या वज्र आ पडा! क्या यह भूत चिपट गया था किसी ग्रह ने ग्रस्त कर लिया है। जब वत्सराज के पास पहुँचा तब बुद्धिमान् वत्सराज ने उसको प्रणाम किया और कहा कि पण्डितजी! बैठिए। फिर कहा कि राजा के पुत्र जयन्त को पाठशाला से बुलवाइए। इसके अनन्तर जयन्त कुमार आया। उससे कुछ पठन-पाठन पूछ कर उसको वापस कर दिया। फिर वत्सराज ने पण्डित से कहा कि अब भोज को बुलवाइए। भोज पहले से ही सब हाल जानता था। वह गुस्से में भर कर लाल आँखें किये हुए आया और बोला—आश्चर्य की बात है! अरे पापी! मैं प्रधान राजकुमार हूँ। अकेला मुझको राजभवन से बाहर ले

जाने की तेरी क्या शक्ति है? इस तरह कह कर भोज ने अपने बायें पैर की खडाऊँ उठा ली और जोर से वत्सराज के सिर में मार दी। वत्सराज ने यह कह कर कि हम तो राजा की आज्ञा का पालन करते हैं, झट भोज को उठा कर रथ मे बैठा लिया और तलवार को म्यान से निकाल कर जल्दी से देवी के भवन को चल दिया। इस प्रकार भोज के पकडे जाने पर लोग शोर मचा कर कहने लगे—अरे! यह क्या है! क्या है! इस तरह कहते हुए शूर-वीर योधा दौडे हुऐ आयें। जब उनको मालूम हुआ कि वत्सराज ने भोज को मारने के लिए पकडा है तब कोई हाथीखाने मे और कोई घुड-साल मे घुसकर, जिसको जो मिला उसी को वह मारने लगा। फिर गली-कूचे में, राजभवन के दर्वाजे पर, चारों ओर बाजो के बजने का ऐसा शब्द हुआ कि आकाश गूँज उठा। अब कोई तो पैनी तलवार से, कोई जहर खा कर, कोई भाला मार कर, कोई अग्नि मे गिर कर, कोई जमीन पर पछाड खा कर, कोई जल में डूब कर—ब्राह्मण, स्त्री, राजपूत, राजसेवक और सामन्त राजा तक—अपने अपने प्राणों का घात करने लगे।

भोज की माता का नाम सावित्री था। उसने जब दासी से अपने लडके का हाल सुना तब वह मुँह ढाँप कर रो रो कहने लगी कि हा पुत्र! तुमको तुम्हारे चाचा ने किस दशा को पहुँचाया। मैंने आज तक जो कुछ व्रत और नियम तुम्हारे वास्ते किये थे वे सब निष्फल हो गये। मुझे दसों दिशायें

शून्य दीखती हैं। हे पुत्र! सर्वज्ञ देव ने सब ऐश्वर्य नष्ट कर दिया। हे पुत्र! जो यहाँ दासियों के सिर कटे हुए पड़े हैं इनको तो एक बार देखो। इस तरह कहती और विलाप करती हुई भोज की माता जमीन पर गिर पड़ी।

इसके बाद जिस तरह बहुत अग्नि जलने से धुआँ उठता है और अँधेरा छा जाता है इसी तरह आकाश मलिन हो गया। और मानो पाप के डर से पश्चिम दिशा मे सूर्य छिप गया हो, इस तरह सूर्य के अस्त हो जाने पर वत्सराज महामाया के मकान पर पहुँच कर भोज से कहने लगा—हे कुमार! हे नौकरो के स्वामी भोज! ज्योति शास्त्र को अच्छी तरह जानने वाले एक ब्राह्मण ने राजा मुञ्ज से कहा कि अब राज्य का भोग भोज करेगा। यह सुन कर मुञ्ज ने तुमको मारने के वास्ते मुझे हुक्म दिया है। भोज ने कहा—

श्रीरामचन्द्रजी का वनवास होना, राजा बलि का बाँधा जाना, पाण्डवों का वन मे रहना, यादवों का मारा जाना, राजा नल का राज्य से अलग होना और दूसरे के घर रह कर रसोई का काम करना, और बली रावण का मारा जाना, इन घटनाओं को देखो। सब लोग काल के वश हो कर नष्ट हो जाते हैं, कोइ नहीं बचता। और देखो—

चन्द्रमा—लक्ष्मी, कौस्तुभमणि और कल्पवृक्ष का सगा भाई है और—अमृतरूपी क्षीरसमुद्र का लड़का है। उसे महादेवजी ने विनयपूर्वक खुशी से अपने मस्तक पर धारण किया है।

इस तरह का बड़प्पन रखता हुआ चन्द्रमा अब भी दैव बल से क्षीणता का त्याग नहीं करता । उसकी कला हमेशा क्षीण हुआ करती है । पत्थर पर जो लकीर खोदी जाती है वह मिटाये नहीं मिटती—ऐसे ही विधाता की गति है—जो होनहार है वह किसी के मिटाये नहीं मिटती । उसका कोई भी उल्लघन नहीं कर सकता ।

भयानक भूमि पर विचरना, पर्वत पर चढना, समुद्र में तैरना, कैद में रहना, गुफा में घुसना, यह सब विधाता की रचना है । इसको कौन पार कर सकता है, सब भोगना ही पडता है । इसके विरुद्ध कोई कुछ नहीं कर सकता ।

जो अपनी इच्छा मात्र से जल को थल और थल को जल कर सकता है, जो धूल के कण को पर्वत, और सुमेरु पर्वत को रजकण बना सकता है, जो तिनको को वज्र के समान और वज्र को तिनके के समान कर सकता है, जो आग को ठंडा और शीत को गर्म बना सकता है, ऐसे क्रीडा-कौतुक करनेवाले अघटनघटनापटु भगवान् के लिए हमारा प्रणाम है ।

अब भोजराज ने बरगद के दो पत्ते लिए और उनका एक दोना बनाया । फिर अपनी जाँघ में छुरी से छेद किया और उससे निकले हुए खून की कुछ बूँदें उस दोने में डाल दीं । उसके बाद एक तिनका ले कर एक पत्ते पर उस खून से भोजराज ने एक श्लोक लिखा और वत्सराज से कहा—हे महाभाग । यह पत्र राजा मुञ्ज को दे देना । अब आप भी

राजा की आज्ञा का पालन कीजिए—अर्थात् मेरा सिर काट कर राजा की आज्ञा पूरी करके विदा हूजिए। वत्सराज का छोटा भाई भी वहाँ साथ गया था। उसने जब मरते समय भी भोज के मुँह की कांति ज्यों की त्यों देखी—उसके मुँह पर उस समय भी कुछ भी उदासी होती हुई न देखी—तब उसने कहा —

एक धर्म ही ऐसा सच्चा मित्र है जो मरने के बाद भी साथ जाता है। और जितने परिवार वाले, रिश्तेदार या धन दौलत जो कुछ भी है वह सब, जिस समय इस शरीर से प्राण पखेरू उड़ता है उस समय, साथ छोड़कर यहीं बने रहते हैं, एक भी साथ नहीं जाता।

शरीर के नष्ट होने पर माता, स्त्री, पुत्र, मित्र, भाई, बन्धु आदि कोई भी मदद करने के लिए साथ नहीं देता, एक धर्म ही साथ जाता है।

इस दुनिया में आकर जो मनुष्य धर्म से विमुख रहता है—धर्म की परवा नहीं करता—वह चाहे जैसा बलवान् हो तब भी निर्बल है, चाहे जैसा धनी हो तब भी निर्धन है और चाहे जैसा शास्त्र का जानने वाला हो, अच्छा पढ़ा-लिखा हो तब भी मूर्ख है। बलवान्, धनवान् और पण्डित होना तभी सार्थक होते हैं जब वह धर्मानुसार काम करने वाले हों। नहीं तो ऐसे बड़े बड़े अनर्थ करने वाले हो जाते हैं जो सर्वथा दुखदाई होते हैं।

जो मनुष्य इसी संसार मे नरकरूपी बीमारी की दवा नहीं कर लेता वह रोगी बनकर, जहाँ दवा वगैर कुछ भी नहीं मिलती ऐसे नरक मे जाकर क्या कर सकेगा। कुछ नहीं।

जो मनुष्य वृद्धावस्था को जानता है—जो जवानी उम्र मे यह समझता है कि मैं बूढा अवश्य हूँगा—जो मौत को भी जानता है कि मैं अवश्य मरूँगा और जो भय तथा रोग को भी समझता है वही पंडित कहलाता है। तात्पर्य यह कि जो इन बातों को अच्छी तरह जान लेता है उससे बुरे काम नहीं हो सकते। ऐसा मनुष्य कहीं ठहरे, कहीं आराम करे, कहीं सोवे और चाहे जिसके साथ हँसे खेले, वह सदा खुशी रहेगा, और हमेशा उसको आराम मिलेगा। वह कभी दुखी नहीं हो सकता।

हे वत्सराज! तुम अपने समान जाति वालो को, अपने समान उम्रवालो को और अपने समान रूपवालो को देखो कि व किस तरह मर कर नष्ट हो जाते हैं। क्या उनको देख कर भी आप को डर और दुख नहीं होता। मालूम होता है, तुम्हारा हृदय वज्र के समान है।

वत्सराज ने जब अपने छोटे भाई के इन वचनो पर खयाल किया तब उसके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ और भोजराज को प्रणाम करके कहने लगा कि मेरे अपराध को क्षमा कीजिए। वह शाम का वक्त था और अधिक अँधेरा हो गया था, इसलिए वत्सराज भोजराज को वहाँ से बिना ही मारे अपने घर

यही प्रायश्चित्त है कि आप फौरन अग्नि मे प्रवेश करें। दूसरे प्रायश्चित्त से इस पाप से छुटकारा नहीं हो सकता।

इतनी बातें हो ही रही थीं कि वहाँ बुद्धिसागर आ पहुँचा। उसने कहा कि हे राजन्! जैसे तुम अधम राजा हो वैसेही तुम्हारा मन्त्री वत्सराज भी नीच है। क्योंकि जिस समय राजा सिन्धुल राज्य से अलग हुआ उस समय अपना सारा राज्य तुमको दे दिया और भोज को तुम्हारी गोद में दिया कि तुम उसकी रक्षा करना। पर तुमने भोज के चाचा होने पर भी उसको मरवा डाला! सच है—

जिन मनुष्यो का स्वभाव बुरा है, जिनकी दुष्ट प्रकृति है वे थोडे दिन रहने वाली जवानी के गरूर मे भर कर ऐसे अनर्थ कर डालते हैं कि जिनसे उनका जन्म ही व्यर्थ हो जाता है। वे ऐसी बुराइयाँ कर बैठते हैं कि दूसरों मे मुँह दिखाने के योग्य नहीं रह जाते।

अच्छे मनुष्य ऐसे ऐसे स्वभाव के होते हैं कि अपने सिर से तिनका उतारने वाले के एहसान को करोड मोहर देने के बराबर मानते हैं। और, बुरे मनुष्यो का यह स्वभाव होता है कि कोई मनुष्य प्राण त्याग करके भी—नाना प्रकार के दुःख सह कर भी—उनका उपकार करे तो उसको भी बैरी सा ही समझा करते हैं।

जो कोई अपने साथ भलाई करे या कोई बुराई कर तो

उसको याद रखना चाहिए । जो ऐसा नहीं करते उनका हृदय पत्थर के समान सख्त समझना चाहिए। ऐसों का जीना वृथा ही है ।

जिस तरह छोटे छोटे अंकुरों की बड़े यत्न से रक्षा करने पर वे समय पाकर—अपने वक्त पर—फल देते हैं, इसी तरह जिस मनुष्य की अच्छी तरह रक्षा की जाती है वह कभी न कभी अवश्य फल देनेवाला होता है ।

सोना, अन्न, रत्न और भी बहुत तरह के धन तथा संसार की जितनी चीजें हैं वे सब प्रजा से ही राजा को मिला करती हैं ।

अगर राजा धर्मात्मा होवे तो प्रजा जरूर धर्मात्मा होगी । अगर राजा पापी हो तो प्रजा भी पापी बन जाती है । प्रजा राजा के अनुसार हुआ करती है, जैसा राजा होता है प्रजा स्वयमेव वैसी ही बन जाती है ।

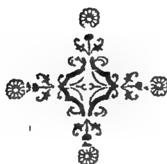
निदान राजा ने उसी रात को अग्नि में प्रवेश करना निश्चित किया । तब राजा के साथ के बैठने-उठने वाले, राज्य तथा शहर के रहने वाले बहुत से मनुष्य राजा से मिलने आये । उस समय सब जगह यह खबर फैल गई कि राजा ने पुत्र को मरवा डाला है । वह उस पाप से डर रहा है और अग्नि में प्रवेश करना चाहता है । इसके बाद बुद्धिसागर मन्त्री ने द्वारपालों को बुला कर कह दिया कि राजा के महल में कोई मनुष्य न आने पावे और वह खुद अकेला ही राजा के महल

बाद योगी ने जो जो बातें राजा को बतलाई वे सब राजा ने की। सब काम हो चुकने पर राजा ने बुद्धिसागर को श्मशान-भूमि मे भेजा। जब रात हो गई तब छिपे हुए भोज को भी नदी पर गुप्त रूप से पहुँचा दिया गया और यह प्रसिद्ध किया गया कि योगी ने भोज को जिला दिया। फिर भोज हाथी पर चढकर पुरवासी तथा मन्त्री लोगो के साथ राजभवन में आया। उस समय भाट लोगो ने स्तुति की धुन लगा दी और मृदग आदि बाजो की आवाज से कान बहरे हो गये। जब राजा मुञ्ज भोज से मिला तब रोने लगा। भोज ने राजा को रोने से रोका और उसकी बडी तारीफ की।

कुछ दिन के बाद राजा मुञ्ज ने बडी खुशी के साथ भोज को अपने राजसिंहासन पर बैठा कर, छत्र और चँवर से विभूषित कर, उसको राज्य दे दिया। भोज को तो राजतिलक करके राजा बना दिया और अपने सब लडको को एक एक गाँव दे दिया। जयन्त लडके पर मुञ्ज का अधिक प्रेम था, उसको राजा भोज के सिपुर्द कर दिया।

कुछ दिन के बाद मुञ्ज ने विचार किया कि परलोक के लिए भी कुछ करना चाहिए, इसलिए उसने वानप्रस्थ आश्रम मे जाने का निश्चय किया। क्योकि शास्त्रों मे लिखा है कि जब लडके घर का कामकाज सँभालने योग्य हो जावें तब वृद्ध मनुष्य को चाहिए कि वह वानप्रस्थ आश्रम में रहे। यही विचार कर मुञ्ज अपनी पटरानियों को साथ लेकर तपोवन को चला

गया। वहाँ उसने जाकर खूब तपस्या की। राजा भोज भी देवता और ब्राह्मणों की कृपा से अच्छी तरह से राज्य करने लगा।



पाँचवाँ परिच्छेद

गोविन्द ब्राह्मण



जब राजा मुञ्ज तो तपोवन में तपस्या करने के लिए चला गया और राजा भोज बुद्धिसागर नामक मुख्य मन्त्री को अपने पास रख कर अच्छी तरह राज्य करने लगा। राज्य करते करते जब बहुत समय बीत गया तब एक दिन राजा भोज अपने बगीचे को जाने लगे। जाते समय उन्हें रास्ते में सामने धारानगर का रहनेवाला एक ब्राह्मण मिला। राजा को देखते ही वह ब्राह्मण आँखें मींच कर आगे बढ़ा। जब दोनों बिलकुल पास आ गये और आमने सामने हुए तब राजा ने पूछा कि हे ब्राह्मण! तुमने मुझको देखा और स्वस्ति—आशीर्वाद—क्यों नहीं दिया? तुमने मुझको देखते ही आँखें मींच लीं, इसका कारण क्या है। ब्राह्मण ने कहा कि हे देव! आप वैष्णव हैं, आप ब्राह्मणों

को कुछ हानि नहीं पहुँचायेंगे, इसलिए आप से मुझे कुछ डर नहीं है । पर आप कभी किसी को कुछ दान नहीं देते, यह आपके लिए अच्छा नहीं है, इससे आपको कोई उदार नहीं कह सकता । आपको यदि आशीर्वाद नहीं दिया जाता तो क्या ? नीतिकारों ने बतलाया है कि यदि कोई सबेरे कजूस का मुँह देख ले तो यदि किसी अन्य पुरुष से भी लाभ पहुँचता हो तो उसको भी हानि हो जाती है । इसी सबब से मैंने आपको देखकर आखें मींच ली थीं। नीति मे लिखा है कि—

उस राजा को प्रजा अच्छी नजर से नहीं देखा करती जिसकी प्रसन्नता भी निष्फल रहे—अगर कोई राजा किसी पर खुश हो जावे और जिस पर वह खुश हुआ है उसको कोई फायदा न पहुँचावे—और जिसका क्रोध भी व्यर्थ हो। और अप्रगल्भ पुरुष की विद्या, कजूस मनुष्य का धन और डरपोक मनुष्य की भुजाओं का बल ये तीन चीजें संसार में व्यर्थ मानी जाती हैं ।

हे राजन ! मेरे वृद्ध पिता काशी को जा रहे थे । उस समय मैंने उनसे पूछा कि पिताजी ! मुझको क्या करना चाहिए ? तब पिताजी ने बतलाया कि—

हे पुत्र ! अगर तुम्हारे हृदय में अच्छी नीति का बीज बोया गया है तो तुम ऐसे राजा की कभी सेवा न करना जिसको मंत्रियों ने अपने काबू में कर रक्खा हो और जो स्त्रियों के वश में रहता हो ।

सब पापों में दो पाप बहुत बड़े हैं—एक तो ऐसा राजा जिसके पास बुरे मन्त्री रहते हों, दूसरे उस राजा की सेवा करना ।

जहाँ मूर्ख राजा, गुणवान् पुरुषों से पराङ्मुख मन्त्री, और जहाँ बुरे मनुष्यों का जोर होता है वहाँ अच्छे मनुष्यो को कभी मौका नहीं मिल सकता ।

जो राजा योग्य और गुणवान् हो, उसके पास चाहे धन-दौलत न भी हो तो भी उसके आश्रय मे रहना चाहिए । क्योंकि किसी समय उससे जरूर फायदा होगा ।

हे देव! जो दान नहीं करते वे उदार नहीं कहलाते—उनको कोई अच्छा नहीं बतलाता । पहले समय मे राजा कर्ण, दधीचि, शिवि और विक्रम आदि राजा हो गये हैं । वे इस समय परलोक मे हैं—इस ससार में नहीं है पर उन्होंने दान आदि ऐसे सत्कर्म किये थे जिससे आज तक सारे ससार मे उनका नाम मौजूद है—मानो वे आज तक यहाँ रहते हैं । क्या उनके समान और कोई राजा है?

जो अवश्य नष्ट होने वाला शरीर है उसकी रक्षा करने से क्या लाभ है? ऐसे यश की रक्षा करनी चाहिए जिसका कभी नाश नहीं होता । मनुष्य मर जाता है, उसका शरीर नष्ट हो जाता है तो भी उसका यशरूपी शरीर जीता रहता है ।

पण्डित हो या मूर्ख, बलवान् हो या दुर्बल, धनी हो या गरीब, सबके लिए मृत्यु बराबर है । मौत जब आती है तब

वह यह ख्याल नहीं करती कि यह धनी है या बलवान्, इसको छोड़ देना चाहिए। नहीं, वह सबके लिए एक सी है, उसके लिए धनी और गरीब सब एक से हैं।

उम्र चली जा रही है, एक क्षण भी नहीं ठहरती, इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह अपने अनित्य शरीर के लिए एक कीर्ति का संचय करे—ऐसे काम करे जिस में संसार में मरने के बाद भी नाम बना रहे।

जो मनुष्य ज्ञान, विक्रम—बहादुरी,—कला, कुल-लज्जा, दान और भोग से रहित हैं—जिनमे ये बातें नहीं है—क्या ऐसे मनुष्यों का जीवन भी अच्छे मनुष्यों के जीवन मे गिना जा सकता है ? कभी नहीं। ऐसो का जीवन व्यर्थ है।

ऊपर कही हुई ब्राह्मण की सब बातें राजा भोज ने अच्छी तरह सुनीं। उसको इन वाक्यो से ऐसा आनन्द हुआ मानो अमृत से भरे हुए तालाब में उसने गोता लगाया हो। वह परब्रह्म परमात्मा मे लीन हुआ साधारण मनुष्य की तरह अपनी आँखों से आनन्द के आँसू टपकाने लगा और बोला के विप्रवर ! सुनो—

संसार मे ऐसे मनुष्य बहुत हैं जो सदा प्रियवचन बोलते हैं। किंतु जो वचन सुनने में प्रिय न लगे पर जिसका फल हितकारी हो ऐसे वचन के कहने और सुनने वाले मनुष्य कहीं नहीं मिलते।

जो मनुष्य बातें करने मे चतुर होते हैं वे हित करने वाले

सब पापों में दो पाप बहुत बड़े हैं—एक तो ऐसा राजा जिसके पास बुरे मन्त्री रहते हों, दूसरे उस राजा की सेवा करना ।

जहाँ मूर्ख राजा, गुणवान् पुरुषों से पराङ्मुख मन्त्री, और जहाँ बुरे मनुष्यों का जोर होता है वहाँ अच्छे मनुष्यो को कभी मौका नहीं मिल सकता ।

जो राजा योग्य और गुणवान् हो, उसके पास चाहे धन-दौलत न भी हो तो भी उसके आश्रय मे रहना चाहिए । क्योंकि किसी समय उससे जरूर फायदा होगा ।

हे देव! जो दान नहीं करते वे उदार नहीं कहलाते— उनको कोई अच्छा नहीं बतलाता । पहले समय मे राजा कर्ण, दधीचि, शिवि और विक्रम आदि राजा हो गये हैं । वे इस समय परलोक में हैं—इस संसार मे नहीं हैं पर उन्होंने दान आदि ऐसे सत्कर्म किये थे जिससे आज तक सारे संसार में उनका नाम मौजूद है—मानो वे आज तक यहाँ रहते हैं । क्या उनके समान और कोई राजा है?

जो अवश्य नष्ट होने वाला शरीर है उसकी रक्षा करने से क्या लाभ है? ऐसे यश की रक्षा करनी चाहिए जिसका कभी नाश नहीं होता । मनुष्य मर जाता है, उसका शरीर नष्ट हो जाता है तो भी उसका यशरूपी शरीर जीता रहता है ।

पण्डित हो या मूर्ख, बलवान् हो या दुर्बल, धनी हो या गरीब, सबके लिए मृत्यु बराबर है । मौत जब आती है तब

वह यह ख्याल नहीं करती कि यह धनी है या बलवान्, इसको छोड़ देना चाहिए। नहीं, वह सबके लिए एक सी है, उसके लिए धनी और गरीब सब एक से हैं।

उम्र चली जा रही है, एक क्षण भी नहीं ठहरती, इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह अपने अनित्य शरीर के लिए एक कीर्ति का सचय करे—ऐसे काम करे जिस म समार में मरने के बाद भी नाम बना रहे।

जो मनुष्य ज्ञान, विक्रम—बहादुरी,—कला, कुल-लज्जा, दान और भोग से रहित हैं—जिनमें ये बाते नहीं है—क्या ऐसे मनुष्यों का जीवन भी अच्छे मनुष्यों के जीवन में गिना जा सकता है? कभी नहीं। ऐसो का जीवन व्यर्थ है।

ऊपर कही हुई ब्राह्मण की सब बातें राजा भोज ने अच्छी तरह सुनीं। उसको इन वाक्यों से ऐसा आनन्द हुआ मानो अमृत से भरे हुए तालाब में उसने गोता लगाया हो। वह परब्रह्म परमात्मा मे लीन हुआ साधारण मनुष्य की तरह अपनी आँखों से आनन्द के आँसू टपकाने लगा और बोला कि विप्रवर! सुनो—

समार मे ऐसे मनुष्य बहुत हैं जो सदा प्रियवचन बोलते हैं। किंतु जो वचन सुनने में प्रिय न लगे पर जिसका फल हितकारी हो ऐसे वचन के कहने और सुनने वाले मनुष्य कहीं नहीं मिलते।

जो मनुष्य बाते करने में चतुर होते हैं वे हित करने वाले

नहीं होते और जो हित करने वाले होते हैं वे चिकनी चुपड़ी बात नहीं करते। वे इस बात की कभी पर्वा नहीं करते कि हम इसको मीठी मीठी बातें बना कर खुश कर लें—किन्तु वे इस बात का ख्याल रखते हैं कि इसकी भलाई होनी चाहिए, चाहे इस वक्त इसको हमारे कहने से बुरा ही क्यों न लगे। संसार में ऐसा मनुष्य मिलना कठिन है जो सच्चा मित्र भी हो और चतुर भी हो जिस तरह कि ऐसी दवा मिलनी मुश्किल है जो रोगी को आराम भी करे और पीने में मीठी भी हो। अक्सर जो दवा कड़ुई होती है वही जल्दी आराम करती है।

राजा जब इस तरह कह चुका तब एक लाख रुपया उस पण्डित को दिया और पूछा कि आप का नाम क्या है? ब्राह्मण ने अपना नाम गोविन्द जमीन पर लिख दिया। राजा ने उस नाम को पढ़कर कहा कि हे ब्राह्मण! तुम रोजमर्रा राजभवन में आया करो। तुमको कोई न रोकेगा। तुमको हम यह अधिकार देते हैं कि जो विद्वान् एवं कवि हों उनको आनन्दपूर्वक सभा में लाया करो, उनका यहाँ सत्कार हुआ करेगा। हम चाहते हैं कि हमारे राज्य में कोई भी विद्वान् दुखी न रहे, विद्वानों को सुख मिलना चाहिए।



छठा परिच्छेद

एक मुख्य मन्त्री

कुछ दिन तक ऐसा ही होता रहा कि जो कोई विद्वान् या कवि आवे तो उसका राज्य की ओर से अच्छी तरह सत्कार किया जावे। जब चारों ओर राजा की यह प्रसिद्धि हो गई कि राजा भोज विद्वानों का बड़ा हित करता है, वह सब दानियों में शिरोमणि है तब चारों ओर से पंडित एवं कवि लोग राजा के पास आने लगे। जो कोई आता उसका अच्छी तरह से आदर-सत्कार किया जाता था। जब धन का खर्च बहुत ही बढ़ गया तब एक दिन एक मुख्य मन्त्री ने कहा कि—

हे राजन्! जिसके पास बहुत से हाथी होते हैं वह विजय पाता है, जिसके पास बड़ा खजाना होता है उसका कोई पराभव नहीं कर सकता और जिसके पास क़िला होता है उसको कोई जीत नहीं सकता।

हे देव ! संसार को देखिए । इसके आगे मन्त्री ने एक ऐसा श्लोक सुनाया जिसके दो मानी होते हैं । वह इस तरह है—

प्रायो धनवतामेव धने तृष्णा गरीयसी ।
पश्य कोटिद्वयासक्तं लक्षाय प्रवणं धनुः ॥

जिनके पास धन होता है उन्हीं को धन में अधिक तृष्णा हुआ करती है । दो कोटि से आसक्त हुए (भरपूर हुए) धनुष को देखिए कि लक्ष के वास्ते (निशाना के लिए) नम्र (नवा) हुआ है । मतलब यह कि दो करोड़ रुपये वाला भी लाख रुपये और बढ़ जावें इसलिए उद्योग किया करता है । धनुष में दो कोटि—आगे के दो हिस्से—होते हैं बांच से धनुष नव जाता है ।

राजा उसकी दो मानी बात सुन कर कहने लगा कि जो न दान करता है और न धन का भोग करता है तथा जिसके धन का मित्र भोग भी नहीं करते वह धन नष्ट हो जाता है । इस तरह कह कर राजा ने उस मन्त्री को उसके अधिकार से अलग कर दिया और उसकी जगह दूसरा मन्त्री नियत करके बोला—

बहुत बड़े कवि को एक लाख रुपया देना, पंडित को पचास हजार और जो सिर्फ मतलब को समझने वाला हो उसको एक गाँव और जो मतलब समझने वाले का कहना समझता हो उसको उससे आधा धन देना चाहिए । मेरे

मन्त्रियों में से जो कोई मेरे दान को मने करने का विचार करता वह मारने योग्य होगा । मैं यह समझता हूँ कि—

जो धनी अपने धन का दान करता है या स्वयं भोग कर लेता है वही धनियों का धन है । बाकी तो मरने के बाद उस धनी के धन का दूसरे ही भोग किया करते हैं ।

जो दान दिया करता है प्रजा उसीसे प्रेम करती है, जो बडा धनी है और दान नहीं करता तो उसको कोई नहीं चाहता । लोग मेघ को चाहते हैं, समुद्र को नहीं ।

देखो, जो अधिक इकट्ठा करने में लगा रहता है वह समुद्र तो जमीन पर पडा रहता है और जल का दान करने वाला मेघ संसार के ऊपर गर्जना किया करता है ।



भोज इस तरह कह ही रहा था कि कहीं से पाँच छ कवि और भी आ गये। उनको देख कर राजा ने अपने मन मे विचार किया कि इतना धन तो मैं अभी हाल मे दे चुका हूँ। यह विचारते हुए उसने अपने स्वभाव मे और मुँह पर भी कुछ तबदीली की। जो पहला कवि था वह राजा के मन का भाव समझ गया और फिर भी कमल के ही मिष से राजा से कहने लगा —

कि कुप्यसि कस्मैचन सौरभसाराय कुप्य निजमधुने ।
यस्य कृते शतपत्र प्रतिपत्र तेऽद्य मृग्यते भ्रमरैः ॥

हे शतपत्र (कमल)! तुम किसी पर क्या क्रोध करते हो, क्रोध करना है तो तुम अपने सुगन्धभरे मधु पर करो, जिस मधु के लिए कि भ्रमर आज तेरा पत्ता पत्ता ढूँढ रहे हैं।

इसके बाद कवि ने जब राजा को खुश होता हुआ देखा तब फिर कहा —

जो मनुष्य कजूस होता है वह अपनी लक्ष्मी का न तो दान कर सकता है और न भोग ही कर सकता है किन्तु उसको सिर्फ हाथ से छू लिया करता है।

जो कोई किसी से कुछ लेने के लिए प्रार्थना करे तो वह प्रार्थना करने वाले से खुश होवे और दान देकर उससे प्रेम करे। ऐसे मनुष्य को जो सुनता है या उसका दर्शन करता है वह स्वर्ग को जाता है।

कवि की बातें सुन कर राजा ने खुश होकर फिर भी

उस कवि को एक लाख रुपया दिया। उस कवि ने पीछे से आये हुए पाँच छ कवियों से कहा कि—यह राजा महा-सरोवर के पुल की भूमि पर रहता है। जब यह घर को जाने लगे तब इससे कुछ कहना। वे कवि लोग राजा के पहले किये हुए सब कामों को तो जानते हो थे सो वे वहीं खडे हो गये और उनमें से एक कवि सरोवर (तालाब) का बहाना करके श्लोक बना कर राजा से बोला —

आगतानामपूर्णानां पूर्णानामपि गच्छताम् ।
यदध्वनि न संघट्टो घटानां सत्सरो वरम् ॥

वह तालाब श्रेष्ठ है जहाँ कि खाली घडे आते हो तथा भर कर भी जाते हों, और उनका (खाली आने वाले और भर कर जाने वालो का) मार्ग में सघट्ट (टकराना) न हो— राजा के प्रति यह भाव कि जो निर्धन आता है वह अवश्य धन ले कर ही जाता है—रास्ते मे अन्यान्य नये निर्धनो की, पहले से आकर धन ले जाने वालो से कोई तकरार नहीं होती (अन्यथा किसी को धन मिले और किसी को न मिले तो वह परस्पर ईर्ष्या से झगडा करने लगे या एक दूसरे से छीनने ही लगे इत्यादि) अतएव तुम श्रेष्ठ हो।

इतना सुनते ही राजा ने उस कवि को एक लाख रुपया दे दिया। फिर गोविन्द कवीश्वर उन बाकी कवियो को देख कर नाराज होने लगा। एक कवि उसके गुस्से का मतलब समझ गया और कहने लगा कि —

कस्य तृषं न क्षपयसि पिबति न कस्तव पयः प्रविश्यान्तः ?
यदि सन्मार्गसरोवर नक्रो न क्रोडमधिवसति ॥

हे अच्छे रास्तेवाले सरोवर ! अगर तुम्हारी गोद में मगर नहीं रहते तो तुम किसकी प्यास को दूर नहीं करते—कौन तुम्हारे पास पानी पीने नहीं आता—और तुम्हारे भीतर (अन्तःकरण मे) घुस के पानी कौन नहीं पीता ?

राजा ने उस कवि की बातें सुनकर उसको दो लाख रुपया दिया और गोविन्द पण्डित को उसके पद से अलग करके कहा कि तुम सभा में तो आते रहो परन्तु किसी के साथ दुष्टता मत करना । उसके बाद राजा ने आये हुए सब कवियों को एक एक लाख रुपया दे दिया । वे सब अपने अपने घर चले गए । राजा भी अपने घर चला गया । कुछ समय के बाद राजा ने अपने मुख्य मंत्री को बुलाया और कहा —

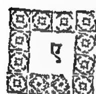
विप्रोऽपि यो भवेन्मूर्खः स पुराद् बहिरस्तु मे ।
कुम्भकारोऽपि यो विद्वान्स तिष्ठतु पुरे मम ॥

मेरे शहर मे अगर ब्राह्मण भी मूर्ख रहता हो तो वह शहर से निकल जावे और यदि कुम्हार भी विद्वान् हो तो यहाँ आकर बसे ।

यह आज्ञा राजा की थी । सब ने इसका पालन किया । धारा नगरी में एक भी मूर्ख न रहा, सब पढ़े लिखे ही रहने लगे । फिर धीरे धीरे राजा की सभा में वररुचि, बाण, विनायक और विद्याविनोद आदि पाँच सौ विद्वान् रहने लगे ।

आठवाँ परिच्छेद

शंकर कवि



क दिन राजा भोज कवियों के साथ अपनी सभा में बैठे हुए थे। उस वक्त द्वारपाल ने आकर प्रणाम किया और कहा कि हे देव! एक विद्वान् दरवाजे पर खड़ा है। राजा ने हुक्म दिया कि बुलाओ। वह कवि अपना दहिना हाथ ऊपर को उठाये हुए आया और कहने लगा —

हे राजन्! आपका अभ्युदय हो—आप के ऐश्वर्य की वृद्धि हो।

शंकर कवि के पास उस समय लिखा हुआ एक पत्र था। इसको देख कर राजा ने पूछा—हे कवे! इस पत्र में क्या लिखा है?

कवि—श्लोक है।

राजा—किसका है?

कवि—हे भोजराज! आपका ही है।

राजा—इसको अच्छी तरह बाँचिए।

कवि—पढता हूँ—

एतासामरविन्दसुन्दरदृशा द्राक्चामरान्दोलना-
दुद्वेल्लद्भुजवल्लिकङ्कणझणत्कारः क्षणं वार्यताम् ॥

परन्तु जरा इन चँवर डुलाने वाली स्त्रियों के कङ्कणों का शब्द बन्द कराइए और पढने लगा कि—

यथा यथा भोज यशो विवर्धते,
सितां त्रिलोकीमिव कर्तुमुद्यतम्।
तथा तथा मे हृदयं विदूयते,
प्रियालकालीधवलत्वशङ्कया ॥

"हे राजन्! जैसा जैसा आपका श्वेत—पवित्र—यश बढा रहा है वैसे वैसे मानो वह तीनों लोको को सफेद किया चाहता है, ऐसा मुझे मालूम पडता है। मुझे यह मालूम करके भी दुःख होता है कि मेरी प्यारी स्त्री की अलकावली भी आपके यश की धवलिमा फैलने से सफेद हो रही है।" मतलब यह कि जब आपके यश से सारा संसार सफेद हो जावेगा तब मेरी स्त्री के बाल भी जरूर सफेद हो जावेंगे।

शंकर कवि के चातुर्य के वचन सुन कर राजा भोज बडे खुश हुए और उन्होंने उस कवि को बारह लाख रुपये देने का हुक्म दे दिया। जो बाकी कवि वहाँ बैठे हुए थे वे इस दान को देख कर दंग रह गए और उनके मुँह की शोभा जाती रही। पर राजा के भय से कोई कुछ बोल न सका। इतने ही में राजा किसी कार्य से अपने घर में चले गये।

उनके चले जाने पर सभा में जितने पण्डित कवि बैठे हुए थे वे सब उसकी (राजा की) बुराई करने लगे। कहने लगे कि देखो राजा की मूर्खता! इसकी सेवा करने से क्या फल होगा। वेद-शास्त्रों के जानने वाले और सदा अपने पास रहने वाले कवियों को तो इसने सिर्फ एक एक लाख ही रुपया दिया। इसके अधिक खुश होने से ही क्या है! और यह शकर कवि तो बिलकुल गाँव का रहने वाला है, इसकी शक्ति ही क्या है! इस तरह से वे कवि आपस में बातचीत कर चुप हो गये। अब कविशिरोमणि कालिदास आये। उनकी करतूत आगे देखिए।



नवां परिच्छेद

कवि कालिदास

एक दिन कालिदास कानों मे मणि-जटित सोने के कुण्डल और साफ कपडे पहने सभा मे गया। वह राजकुमार की तरह मालूम होता था। उसके शरीर से खुशबू निकल रही थी। वह कामदेव के समान अत्यत सुदर था। वह कविता-शरीर धारण किये हुए मालूम होता था। उसको देखते ही विद्वानों की सभा चकित हो गई। उसने आते ही सब कवियों को प्रणाम किया और पूछा कि राजा भोज कहाँ हैं। उन्होंने कहा कि राजा महल के भीतर गये हैं। फिर उसने सब कवियों को एक एक पान दिया और हाथियों के बीच शेर की तरह वह उस सभा मे बैठ गया।

थोडी देर बैठने के बाद उसने पहले से बैठे हुए कवियों से कहा कि राजा ने जो शङ्कर कवि को बारह लाख रुपये दिये हैं उससे तुमको गुस्सा नहीं करना चाहिए। तुम लोगों ने राजा का मतलब नहीं समझ पाया कि उन्होंने बारह

लाख क्यों दिये हैं। मतलब यह है कि शकर (महादेव) का पूजन आरम्भ करने में शकर कवि को तो एक ही लाख से पूजा है किन्तु वैसी ही निष्ठा रखने वाले, उसी शकर नाम से प्रसिद्ध, मूर्त्तिमान्, प्रत्यक्ष दूसरे ग्यारह रुद्रों को जान कर और उनमें से हर एक को अलग अलग एक एक लाख रुपया देने के लिए राजा ने एक साथ एक ही शकर को दे दिये हैं। यही राजा का अभिप्राय है। कालिदास की बात सुन कर सब कवियों को बडा अचम्भा हुआ।

थोडी देर के बाद किसी राजकर्मचारी ने आकर राजा से कहा कि एक बडा विद्वान् आया है। राजा उसको महादेव समझ कर सभा में आया। राजा को मालूम हुआ की बारह लाख रुपये देने का मेरा मतलब इसने कह दिया है, यह जान कर राजा को बडा आश्चर्य हुआ। राजा को देख कर कवि ने कहा कि तुम्हारा कल्याण हो। राजा ने भी उसको प्रणाम किया और हाथ से हाथ मिला कर उसको अपने राजभवन के भीतर ले गया और एक ऊँचे मकान में जाकर दोनो बैठ गये। राजा ने पूछा कि हे कवि! कौन कौन से अक्षर आपके नाम में सौभाग्य को प्राप्त हो रहे हैं (अर्थात् आपका नाम क्या है)? आपका किस देश से वियोग हुआ (अर्थात् आप कहाँ से आए हैं)? आपके आने से वहाँ के सज्जनों को तो बडा दुःख हुआ होगा। फिर कवि ने राजा के हाथ पर अपना नाम 'कालिदास' लिख दिया। कालिदास

का नाम बाँचते ही राजा उसके चरणों मे गिर पडा । फिर दोनों को बैठे बैठे रात हो गई । राजा ने कहा कि हे मित्र, सन्ध्या का वर्णन करो । कवि कहने लगा—

व्यसनिन इव विद्या क्षीयते पङ्कजश्री-
गुणिन इव विदेशे दैन्यमायान्ति भृङ्गा ।
कुनृपतिरिव लोकं पीडयत्यन्धकारो,
धनमिव कृपणस्य व्यर्थतामेति चक्षु ॥

जिस तरह किसी दुर्व्यसन मे लगे हुए मनुष्य की विद्या नष्ट हो जाती है, इसी तरह रात मे कमल की शोभा जाती रहती है, जिस तरह गुणी मनुष्य परदेश में गरीबी पाते हैं इसी तरह भौंरे रात को दीनभाव—गरीबी—पाते हैं, जिस तरह बुरा राजा प्रजा को दुख देता है इसी तरह अँधेरा फैलता जाता है और जिस तरह कजूस मनुष्य का धन व्यर्थ होता है इसी तरह रात को आँखे व्यर्थ हो जाती हैं। सध्या ऐसी होती है ।

इसके बाद वह राजा की प्रशसा करने लगा —

उपचार कर्तव्यो यावदनुत्पन्नसोहृदा पुरुषा ।
उत्पन्नसौहृदानामुपचार कैतव भवति ॥

जब तक किसी की किसी के साथ मित्रता नहीं हुई तब तक उपचार (=तकल्लुफ) करना चाहिए। जिनकी परस्पर मित्रता हो गई उनका आपस मे तकल्लुफ करना मानो ठगी है ।

जो राजा कवियों के क्रम को और उनकी बढ़िया काव्य-रचना को समझता है उसने मानों सोने से भरी हुई सारी पृथिवी कवियों को दे डाली ।

अच्छे कवि के शब्दों की सुन्दरता एवं उनके भाव को अच्छा कवि ही जान सकता है, दूसरा नहीं । बाँझ स्त्री गर्भवती स्त्री की बातों को क्या समझे ।

जब इस तरह से कालिदास ने कहा तब उन दोनों की परस्पर गाढ़ी मैत्री हो गई ।

कालिदास कविशिरोमणि तो थे ही । उनकी एक एक बात बड़ी अनोखी होती थी । उनकी बातों से प्रसन्न होकर राजा भोज ने उनको बहुत सा रुपया दिया । फिर कालिदास ने भोज की प्रशंसा करना शुरू किया —

महाराज श्रीमज्जगति यशसा ते धवलिते,
पय पारावार परमपुरुषोऽयं मृगयते ।
कपर्दी कैलासं करिवरमभौमं कुलिशभृ-
त्कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना ॥
नीरक्षीरे गृहीत्वा निखिलखगततीर्याति नालीकजन्मा,
चक्रं धृत्वा तु सर्वानटति जलनिधींश्चक्रपाणिर्मुकुन्दः ।
सर्वानुत्तुङ्गशैलान्दहति पशुपतिः फालनेत्रेण पश्यन्
व्याप्ता त्वत्कीर्तिकान्ता त्रिजगति नृपते भोजराज क्षितीन्द्र ।
विद्वद्राजशिखामणे तुलयितुं धाता त्वदीयं यशः
कैलासं च निरीक्ष्य तत्र लघुतां निक्षिप्तवान्पूर्तये ।
उक्षाणं तदुपर्युमासहचरं तन्मूर्ध्नि गङ्गाजलं
तस्याग्रे फणिपुंगवं तदुपरि स्फारं सुधादीधितिम् ॥

स्वर्गाद्गोपाल कुत्र व्रजसि सुरमुने भूतले कामधेनो
वंत्सस्यानेतुकामस्तृणचयमधुना मुग्धदुग्ध न तस्या ।
श्रुत्वा श्रीभोजराजप्रचुरवितरण व्रीडशुष्कस्तनी सा ,
व्यर्थो हि स्यात्प्रयासस्तदपि तदरिभिश्चर्वित सर्वमुर्व्याम् ॥

हे महाराज श्रीमन्! आपकी कीर्ति इतनी फैल गई है कि सारा ससार सफ़ेद हो रहा है। इसी लिए परम पुरुष विष्णु क्षीरसागर को ढूँढ रहे हैं, महादेवजी कैलाश को ढूँढ रहे हैं, राजा इन्द्र ऐरावत हाथी को ढूँढ रहा है, राहु चद्रमा को ढूँढ रहा है और ब्रह्माजी हस को ढूँढ रहे हैं अर्थात् आपकी कीर्ति से सब ससार सफेद दिखाई देता है। ये चीजें भी सफेदी मे मिल कर खो गई।

हे भोजराज! आपकी कीर्ति-कान्ता तीनों लोको मे व्याप रही है। आपके यश से सब चीजें सफेद हो गई हैं इसलिए ब्रह्माजी तो जल और दूध लेकर सब पक्षियो के पास जाते हैं अर्थात् हस की परीक्षा करते हैं, विष्णु भगवान् मट्ठा लेकर सब समुद्रों के पास फिरते हैं अर्थात् दूध की परीक्षा करते हैं और महादेवजी अपनी अग्निस्वरूप तेज आँखो से देखते हुए सब ऊँचे पर्वतो को जला रहे हैं अर्थात् चादी के पर्वत कैलाश की परीक्षा करते हैं।

कवि कालिदास के वाक्यों को सुनकर राजा भोज बडा प्रसन्न हुआ। उसको सुनाए हुए श्लोकों का कालिदास को खुब पुरस्कार मिला। कालिदास को राजा ने अपनी सभा मे सर्वोपरि पण्डित मानकर रक्खा।

दसवां परिच्छेद

कुछ पण्डित और कालिदास

थ दिन बदिन यह बात अधिक फैलती गई कि राजा भोज को कविता का बड़ा शौक़ है। तब कुछेक कवियो ने परस्पर सलाह की कि नगर से बाहर चलकर भुवनेश्वरी देवी के मदिर मे बैठकर कविता करनी चाहिए। वे सब वहाँ गये और कविता करने लगे। उनमे एक पडित अभिमानी था। उसने एक श्लोक का चौथा चरण बनाया। दूसरा दूसरे ने पूरा किया। पर श्लोक का आगे का आधा हिस्सा किसीसे पूरा न हो सका। इतने ही में कालिदास मदिर मे देवी के दर्शन करने को गये। कालिदास को देखते ही सब कवि कहने लगे कि हम सब वेद शास्त्रों के जानने वाले हैं फिर भी राजा हमको कुछ भी नहीं

देता । आप जैसो को तो वह यथेष्ट धन दिया करता है। इसलिए हमने विचार किया था कि यहाँ आकर हम भी कविता वनावेंगे । हमने वहुत विचार किया पर अव तक आधा ही श्लोक वन सका है, आधा वाकी है सो आधा आप वना दीजिए। पूरा श्लोक हो जाने पर हम राजा को सुनावेंगे जिससे वह हमको कुछ देगा । वे अपने वनाये हुए श्लोक का आधा हिस्सा कालिदास को सुनाने लगे। कालिदास ने आधा श्लोक सुनकर इसके आगे का हिस्सा भी पूरा कर दिया। अव वे लोग राजा के दरवाजे पर गये और द्वारपालों से कहने लगे कि हम कविता करके लाये हैं, यह कविता राजा को दिखलाओ । वह द्वारपाल आनन्दपूर्वक हँसते हुए राजा के पास जाकर प्रणाम करके कहने लगा —

राजमाषनिभैर्दन्तै कटिविन्यस्तपाणय ।
द्वारि तिष्ठन्ति राजेन्द्रच्छान्दसा श्लोकशत्रव ॥

हे राजेन्द्र ! राजमाष (लोविया) के से दाँतों वाले, अपनी अपनी कमर पर हाथ धरे हुए, श्लोकशत्रु (साहित्यशून्य) शुष्क छान्दस (तुकवन्द) द्वार पर खडे हैं।

राजा ने उन सव को वुलाया । वे सभा के भीतर गये और मिलने के वाद एक ही साथ अपनी रची हुई कविता को पढने लगे। कविता को सुनते ही राजा ने जान लिया कि इसमे आधा श्लोक इन पडितो का वनाया हुआ है और आधा कालिदास का। राजा ने उन सव से कहा कि जिसने

श्लोक के आगे का आधा हिस्सा बनाया है उसका हम रुपया देते हैं, पहले आधे हिस्से का कुछ नहीं। उन सब कवियों के साथ कवि कालिदास भी वहाँ थे, उनको देखकर राजा ने कहा—हे कवे! आगे का आधा हिस्सा तुमने बनाया है? कवि कालिदास ने कहा —

कविता का भाव अनुभवी मनुष्य ही जान सकता है। जिसने कविता के रस का अच्छी तरह अनुभव किया है वही कविता का भाव समझ सकता है।

राजा ने कहा कि हे कवि! तुम ठीक कहते हो।

सरस्वती के काव्यरूपी अमृतफल मे अपूर्व रस होता है। इस वाणी का ऐसा अजीब रस होता है कि चखने के समय तो सबको एक सा मालूम पडता है, पर इस फल के स्वाद को अच्छी तरह समझने वाला केवल कवि ही होता है।

जगत् की ओर विचार करते हुए ये दो चीजे मेरे हृदय में बस गई हैं —(१) ईख से पैदा होने वाली शकर, गुड आदि चीजें और (२) कवियो की बुद्धि।



जो मूर्ख हो और जिसे घर से निकाल कर उस कवि को उसके घर मे रक्खे। घूमते घूमते एक जुलाहे का घर मत्री को दिखलाई दिया । तब उसको वुला कर मत्री ने कहा कि तू इस घर से निकल जा, इसमे एक विद्वान् रहेगा। यह वात सुन कर जुलाहा दौडा हुआ राजा की सभा मे पहुँचा और प्रणाम करके राजा से कहने लगा कि देव! आपका मत्री मुझको मूर्ख समझ कर घर से निकाल रहा है । अव तू मालूम कर कि मैं मूर्ख हूँ या पढा-लिखा हूँ । उसने कहा —

मैं कविता तो करता हूँ पर अच्छी कविता नहीं कर सकता। अच्छी कविता करता हूँ तो वहुत देर लगती है और वडी कोशिश करनी पडती है। हे राजाओ के मस्तकमणियों से शोभित चरण आसन वाले उत्तम राजेन्द्र! हे दण्ड देने के विधान जानने वाले राजन्! मैं कविता करता हूँ और जुलाहे का काम भी करता हूँ, और अव जाता हूँ।

जुलाहे ने राजा के लिए 'तू' इस तरह एकवचन का प्रयोग किया था, इस लिए राजा ने कहा कि अरे जुलाहे! तेरी कविता तो मनोहर है । कविता के पदों का जोड भी अच्छा है, तेरी कविता मे मधुरता और सुन्दरता दोनो हैं पर विचार करके कविता कहनी चाहिए।

राजा की वात सुन कर कुविद जुलाहा गुस्से मे भर कर कहने लगा कि यहाँ उत्तर तो मेरे पास है पर मैं कहना नहीं चाहता । क्योंकि विद्वान् के धर्म से राजधर्म में फर्क है। राजा

ने कहा—अगर तुम्हारे पास जवाब है तो कहो । उसने कहा—हे राजन्! कालिदास के सिवा दूसरे को मैं कवि नहीं समझता। आपकी सभा में कालिदास के सिवा कविता के मर्म को जानने वाला दूसरा कवि कौन है? मेरी राय में कोई नहीं।

जो गुरु के कृपारूप अमृत पाक से पैदा हुआ सरस्वती वाणी का ऐश्वर्य है वह कवि को ही मिल सकता है। जो केवल पाठ की प्रतिष्ठा की सेवा करने वाले हैं उनको नहीं मिल सकता। जिस तरह पवित्र पानी से भरे हुए तालाब में पडा हुआ भैंसा कीचड ही किया करता है, वह तालाब की सुगंधि नहीं ले सकता। फिर जुलाहे ने कहा —

बालकपन में पुत्रों को, तारीफ करते समय कवियों को और युद्ध करते समय योद्धाओं को, 'तू' शब्द कहना ही अच्छा माना गया है। हे राजन्! तुमको यह 'तू' शब्द क्यों बुरा मालूम हुआ? याद तो करो।

इस पर राजा उस जुलाहे से बडा प्रसन्न हो गया और उसको खूब रुपया दिया और कहा कि तुम डरो मत। तुम्हारा कोई कुछ न करेगा। वह आनन्दपूर्वक उसी मकान में बना रहा।



बारहवां परिच्छेद

राजा भोज और बाण पण्डित

एक बाण नामक पण्डित था। राजा भोज उसका मान करते थे तथा धनादि से उसकी अच्छी सहायता किया करते थे। इतना होने पर भी वह पंडित अपने अपूर्वकर्मानुसार सदा गरीब ही रहता था। अमीर कभी नहीं बना। एक दिन राजा भोज रात मे वेश बदल कर नगर में घूमने को निकले। घूमते घूमते राजा उसी पंडित के मकान पर पहुँच गये। उसी वक्त रात में पंडित गरीबी से घबरा कर अपनी स्त्री से कह रहा था कि देवि! राजा भोज ने तो कई बार मेरी इच्छा पूरी की, अब भी यदि उससे प्रार्थना करूँगा तो जरूर कुछ न कुछ देगा पर बार बार प्रार्थना करने से मूर्ख की भी जिह्वा थक जाती है। बार बार किसी से माँगा नहीं जाता। इस तरह कह कर वह कुछ देर तक चुप हो रहा। फिर कहने लगा —

हे महादेव जी! हलाहल विष और किसी से माँगना, इन

दोनों मे कौनसी बात कठिन है? इनमे जो अधिक और कम हो उसको आपकी ही जिह्वा ठीक ठीक कह सकती है। किसी स माँगना जह्‌र से भी अधिक बुरा है। (महादेवजी ने जहर भी खाया है और याचना भी की है अतएव महादेवजी से यह बात पूछी गई।) मतलब यह कि—

हे देवि! दरिद्रता की परम मूर्त्ति माँगना है। धन का न होना ही कुछ बडा दरिद्र नहीं है। शिवजी कौपीन धारण करते हैं तो भी लोग उनको परमेश्वर मानते हैं और उनकी सेवा करते हैं।

दूसरों की सेवा सुख की जड काटने वाली है। जो किसी की सेवा करता है उसको कभी सुख नहीं मिल सकता। बुरा व्यसन धन की जड काटने वाला है, व्यसनी के पास धन नहीं रह सकता। गुरुओं की जड को काटने वाली याच्ञा—माँगना- है। बुरा राजा प्रजा की जड को नष्ट करने वाला होता है। जिस मनुष्य का स्वभाव अच्छा नहीं, जो क्रोधी और दुर्व्यसनी है उसका लडका कुल की जड को काटने वाला होता है।

इसलिए गरीबी होने पर भी मुझ से राजा के आगे कुछ प्रार्थना नहीं हो सकेगी।

क्षणमात्र में आकर चला जाने वाला मेघ सबको अच्छा [illegible]स होता है और नित्य प्रति अपनी किरणों को फैलाने [illegible] सूर्य सबको असह्य मालूम पडता है। अर्थात् धूप से [illegible] हैं।

हे देवि। यह सव कुछ होते हुए भी जो अभ्यागत्—वैश्वदेव के समय—आकर भूखे चले जाते हैं, इससे मेरे मन मे वडा दु ख होता है।

दरिद्रतारूपी अग्नि का सताप सतोषरूपी जल से शान्त हो सकता है, परन्तु मॉगने वाले की आशा नष्ट होने का अन्तर्दाह कैसे सहा जावे।

वाण पण्डित की ये सव वातें राजा भोज अच्छी तरह सुन रहा था। उसने मन मे सोचा कि इस समय पण्डित को मैं कुछ न दूँगा, सवेरे इसका अच्छी तरह सत्कार करूँगा। यह सोच विचार कर राजा वहाँ से चल दिया।

जिस कविता से मूर्ख मनुष्य चतुर नही वन जाते, जिस वली ने वुरे व्यसन वाले को ठीक रास्ते पर नहीं पहुँचाया और जिस धनी ने अपने धन से मॉगने वाले को अपने समान धनी नहीं वना दिया उस कविता, वल और धन से क्या हुआ—अर्थात् कुछ नहीं।

इस तरह विचारता हुआ राजा घूम ही रहा था कि रास्ते में दो चोर जाते हुए मिले। उनमें से एक शकुन्तक नाम का चोर दूसरे मराल चोर से कहने लगा कि भाई। इस समय रात है और वडा अँधेरा हो रहा है तो भी मैं सिद्ध अजन के कारण ससार की छोटी से छोटी सव चीजों को देख रहा हूँ। मैं देखता हूँ कि जो मैं यह खजाने से सोना आदि धन लाया हूँ यह भी मुझको सुख देने वाला नहीं है। फिर शकुन्तक

कहने लगा कि चारों ओर रक्षा करने वाले सिपाही घूम रहे हैं, और अगर तुरही और ढोल आदि की आवाज हुई तो जाग जावेंगे। इसलिए अच्छा हो कि चुराये हुए धन को बाँट लो और अपने अपने हिस्से में आये हुए धन को लेकर जल्दी चल देना चाहिए। मराल ने कहा, हे मित्र! यह धन दो करोड़ है, तुम इसका क्या करोगे? शकुन्तक ने कहा कि यह धन मैं किसी विद्वान ब्राह्मण को दूँगा, जिससे वह वेदवेदांग का जानने वाला ब्राह्मण किसी दूसरे से न माँगे। मराल ने कहा कि यह आपका विचार बहुत अच्छा है।

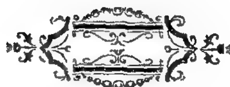
दान करते हुए, युद्ध करते हुए और किसी किताब का पाठ करते हुए यदि रूँगटे खड़े हो जावें तो असली दान और पुरुषार्थ यही है।

मराल ने फिर कहा कि इस धन का दान करने से तुम को पुण्य-फल कैसे मिल सकता है? यह धन तो चोरी का है। शकुन्तक ने कहा कि चोरी करके धन इकट्ठा करना तो हमारा कुलपरम्परा का धर्म है। मराल ने कहा, यह समझ कर कि अगर सिर कट जावे तो भी परवा नहीं पर धन चुराना चाहिए, इस तरह बड़े दुख उठा कर तुमने इस धन को इकट्ठा किया है। यह धन तुम से किस तरह दिया जावेगा? शकुन्तक ने कहा —

मूर्ख मनुष्य गरीब हो जाने के डर से अपने धन का कभी दान नहीं करता और जो बुद्धिमान् होता है वह यह डर

करके कि गरीबी आने पर सब धन नष्ट हो जावेगा धन का दान सदैव करता रहता है। इसलिए दान करना ही अच्छा है।

इस तरह दोनों के संवाद को सुन कर राजा बड़ा खुश हुआ।



तेरहवां परिच्छेद

सुख, मन्त्री और एक चोर

मन्त्रियो ने जब देखा कि राजा बेतरह रुपया खर्च कर रहा है तब एक दिन राजा के सोने के स्थान पर एक मन्त्री एक कागज पर श्लोक का चौथा चरण लिख कर खाट से चिपका आया कि—"आपदर्थं धन रक्षेत्"—आपत्ति के समय के लिए मनुष्य को धन की रक्षा करना चाहिए। जब राजा सोकर उठा तब उसने खाट में एक कागज चिपका हुआ देखा। उसको पढ कर वह हँसने लगा। फिर उसी कागज पर उसने श्लोक का दूसरा चरण लिख दिया कि "श्रीमतामापद कुत" अर्थात् श्रीमानो को आपत्ति कहाँ? धनिकों को आपत्ति हुआ करती है।

दूसरे दिन उस मन्त्री ने उस लिखे हुए वाक्य को पढा और श्लोक का तीसरा चरण लिख दिया "सा चेदपगता लक्ष्मी" यदि वह लक्ष्मी चली जावे तब क्या हो?

जब राजा ने फिर इस वाक्य को लिखा देखा तब उसने श्लोक का शेष चौथा चरण लिख दिया कि 'सञ्चितार्थो विनश्यति' अर्थात् इकट्ठा किया हुआ धन भी तो नष्ट हो जाता है ।

जिस मंत्री ने लिख कर कागज चिपका दिया था उसने जब राजा के लिखे हुए चौथे वाक्य को पढ़ा तब उसको चेत हुआ। वह समझ गया कि राजा का विचार सच्चा है। धन की गति चञ्चल है, वह एक जगह कभी नहीं रहता। फिर मंत्री राजा के सामने आकर हाथ जोड़ कहने लगा कि हे राजन्! वह काम मैंने ही किया था, मेरा अपराध क्षमा कीजिए।

इसके बाद राजा अपना काम-काज करके अपने महल में सो गया। इसी रात में एक चोर सुरंग लगा कर राजा के सोने के मकान में चोरी करने आया। वहाँ उसको बहुत से रत्नजटित जेवर आदि मिल गये। माल लेकर चोर जाना ही चाहता था कि राजा की आँख खुल गई। राजा जागकर एक श्लोक के तीन चरण बनाकर बार बार कहने लगा, जिसका मतलब यह था—

"मेरे चित्त को हरने वाली मेरी स्त्रियाँ हैं, मित्र भी मेरे अनुकूल हैं, मेरे भाई-बन्धु सज्जन हैं, मेरे सेवक नम्रतापूर्वक बोलते हैं, मेरे हाथी गर्जने वाले और घोड़े चचल हैं"। इस तरह वह अपने सुख का वर्णन कर रहा था। इसके आगे

का श्लोक का चौथा चरण राजा से न बनता था । श्लोक पूरा करने के लिए वह बार बार उन्हीं पदों को दुहराने लगा। चोर भी सुन रहा था । उसने चौथा चरण बना कर कह दिया कि—"सम्मीलने नयनयोर्नहि किञ्चिदस्ति" हे राजन्! जब आँखें मिच जाती हैं, मनुष्य मर जाता है, तब कुछ भी नहीं रहता। सब यहीं पड़ा रह जाता है।

इस वाक्य को सुन कर राजा आश्चर्य करने लगा कि इस समय यह मनुष्य यहाँ कहाँ से आया। राजा उठ कर उसकी ओर चला। वह हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे राजन्! मैं चोर हूँ, मुझे क्षमा कीजिए। उसका बनाया हुआ वाक्य सुन कर राजा पहले ही से खुश हो रहा था। उसने उसको सब चुराया हुआ माल दे कर संतुष्ट किया। चोर वहाँ से चला गया।

चौदहवां परिच्छेद

लड़के का जलना

एक दिन राजा भोज रात को वेश वदल कर अपने नगर का हाल देखने के लिए निकले। इधर उधर घूमते हुए वे एक ब्राह्मण के घर जा खडे हो गये। वहा देखा कि ब्राह्मण की स्त्री अपने पति की सेवा में लगी हुई है। पति उसकी गोद मे सिर रक्खे सो रहा है और उसका लडका जलती हुई आग मे गिर पडा है। वह लडका आग मे पडा हुआ ही हँस रहा है और बातें कर रहा है। उसको आग ने बिलकुल नहीं सताया। लडके की माता पतिव्रता थी। उसने अपने लडके का उस समय कुछ भी खयाल न किया। पति को नहीं जगाया। यह हाल देख कर राजा अपने मकान पर चले गये। दूसरे दिन राजा ने श्लोक का एक चरण बना कर कहा—"हुताशनश्चन्दनपंकशीतल"—अग्नि चन्दन के समान ठंडी है। यह सुन कर सब पण्डितों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह

कैसे हो सकता है। परन्तु कालिदास ने पूरा श्लोक बना कर उत्तर दिया—

सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके,
न बोधयामास पतिं पतिव्रता।
तदाभवत्तत्पतिभक्तिगौरवा
द्धुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥

पुत्र आग में गिर पड़ा है पर वह पतिव्रता स्त्री अपना काम छोड़कर उसको आग में से नहीं निकालती। फिर भी उसके पुत्र को कुछ कष्ट नहीं हुआ। आग को पतिव्रता का डर था इस लिए वह चन्दन की तरह ठंडी हो गई।

यह सुन कर राजा भोज अपने मन में विचार करने लगा कि इस काम को तो मैंने ही देखा था। दूसरा मनुष्य वहां कोई नहीं था। इस कालिदास ने ज्यों का त्यों हाल कह दिया। यह बड़ा बुद्धिमान् और विचारशील है।



पन्द्रहवां परिच्छेद

दरिद्रता का नाश

एक ब्राह्मण वडा गरीब था। वह पढा लिखा भी थोडा ही था। अपना पेट पालने के लिए वह वडी मेहनत किया करता था। राजा भोज का यश उसने सुन ही रक्खा था। एक दिन उसने धारा नगरी को जाने का पक्का विचार किया। उसने मन में विचार किया कि राजा के पास जाना तो चाहिए पर राजा की भेंट के लिए कुछ जरूर चाहिए। क्योंकि राजा, गुरु, ज्योतिषी, वैद्य और मित्र के घर जाने पर कुछ भेंट जरूर ले जानी चाहिए। यह सोच कर कुछ भेंट ले जाने का ब्राह्मण ने पक्का विचार कर लिया। अब वह सोचने लगा कि क्या ले जाना ठीक है। वह स्वयं तो बहुत गरीब था। रुपया खर्च करने की शक्ति थी नहीं। इससे विचार करते करते उसने निश्चय किया कि कोई खाने की चीज लेता चलूँ तो अच्छा है। वह कहीं से ईख के कुछ टुकडे ले आया और उनको एक

फटे कपडे में बाँध कर धारा नगरी को चल दिया। वह दूसरे दिन वहाँ पहुँच गया।

राजा भोज की सभा के स्थान मे वह जाकर ठहर गया। मार्ग चलते चलते वह बहुत थक गया था इससे नींद आने लगी। वहाँ जो मनुष्य थे उनसे उसने पूछा कि भाई! मैं यहाँ सो जाऊँ? और कृपा करके यह ख्याल रखना कि जब सभा में सब मनुष्य आ जावे तब मुझे जगा देना। वहाँ के मनुष्यों ने कह दिया कि सो जाओ। सोते समय वह अपने ईख के टुकडों को सिर के नीचे रखकर सो गया। उसके सो जाने पर वहाँ के मनुष्यों ने उसके सिर के नीचे से ईख के टुकडो की पोटली निकालने का विचार किया। धीरे से पोटली निकालकर उन्होंने उस पोटली मे से वे टुकडे तो निकाल लिये और लकडी के छोटे छोटे टुकडे पोटली मे बाँध दिये। फिर वह पोटली वहीं सिर के नीचे रख दी।

जब सभा मनुष्यों से भर गई तब एक मनुष्य ने उसको जगा दिया। वह घबरा कर उठा और अपनी पोटली लेकर सभा मे पहुँचा। उसने सबके देखते हुए वह पोटली राजा भोज के सामने खोल दी। वह तो यही समझता था कि इसमे ईख के टुकडे हैं पर पोटली के खुलते ही उसमें से लकडी के टुकडे निकले। लकडी के टुकडे देख कर सब लोग अचम्भा करने लगे कि यह क्या! राजा भोज भी अपने सामने लकडी के टुकडे देख कर गुस्सा करने लगा।

पन्द्रहवां परिच्छेद

दरिद्रता का नाश

एक ब्राह्मण बडा गरीब था। वह पढा लिखा भी थोडा ही था। अपना पेट पालने के लिए वह बडी मेहनत किया करता था। राजा भोज का यश उसने सुन ही रक्खा था। एक दिन उसने धारा नगरी को जाने का पक्का विचार किया। उसने मन मे विचार किया कि राजा के पास जाना तो चाहिए पर राजा की भेट के लिए कुछ जरूर चाहिए। क्योंकि राजा, गुरु, ज्योतिषी, वैद्य और मित्र के घर जाने पर कुछ भेंट जरूर ले जानी चाहिए। यह सोच कर कुछ भेंट ले जाने का ब्राह्मण ने पक्का विचार कर लिया। अब वह सोचने लगा कि क्या ले जाना ठीक है। वह स्वय तो बहुत गरीब था। रुपया खर्च करने की शक्ति थी नहीं। इससे विचार करते करते उसने निश्चय किया कि कोई खाने की चीज लेता चलूं तो अच्छा है। वह कहीं से ईख के कुछ टुकडे ले आया और उनको एक

फटे कपडे में बाँध कर धारा नगरी को चल दिया । वह दूसरे दिन वहाँ पहुँच गया ।

राजा भोज की सभा के स्थान मे वह जाकर ठहर गया । मार्ग चलते चलते वह बहुत थक गया था इससे नींद आने लगी । वहाँ जो मनुष्य थे उनसे उसने पूछा कि भाई ! मैं यहाँ सो जाऊँ ? और कृपा करके यह खयाल रखना कि जब सभा में सब मनुष्य आ जावें तब मुझे जगा देना । वहाँ के मनुष्यों ने कह दिया कि सो जाओ । सोते समय वह अपने ईख के टुकडों को सिर के नीचे रखकर सो गया । उसके सो जाने पर वहाँ के मनुष्यों ने उसके सिर के नीचे से ईख के टुकडो की पोटली निकालने का विचार किया । धीरे से पोटली निकालकर उन्होने उस पोटली मे से वे टुकडे तो निकाल लिये और लकडी के छोटे छोटे टुकडे पोटली मे बाँध दिये । फिर वह पोटली वहीं सिर के नीचे रख दी ।

जब सभा मनुष्यों से भर गई तब एक मनुष्य ने उसको जगा दिया । वह घबरा कर उठा और अपनी पोटली लेकर सभा मे पहुँचा । उसने सबके देखते हुए वह पोटली राजा भोज के सामने खोल दी । वह तो यही समझता था कि इसमें ईख के टुकडे हैं पर पोटली के खुलते ही उसमें से लकडी के टुकडे निकले । लकडी के टुकडे देख कर सब लोग अचम्भा करने लगे कि यह क्या ! राजा भोज भी अपने सामने लकडी के टुकडे देख कर गुस्सा करने लगा ।

पन्द्रहवां परिच्छेद

दरिद्रता का नाश

एक ब्राह्मण बडा गरीब था। वह पढा लिखा भी थोडा ही था। अपना पेट पालने के लिए वह बडी मेहनत किया करता था। राजा भोज का यश उसने सुन ही रक्खा था। एक दिन उसने धारा नगरी को जाने का पक्का विचार किया। उसने मन मे विचार किया कि राजा के पास जाना तो चाहिए पर राजा की भेंट के लिए कुछ जरूर चाहिए। क्योंकि राजा, गुरु, ज्योतिषी, वैद्य और मित्र के घर जाने पर कुछ भेंट जरूर ले जानी चाहिए। यह सोच कर कुछ भेंट ले जाने का ब्राह्मण ने पक्का विचार कर लिया। अब वह सोचने लगा कि क्या ले जाना ठीक है। वह स्वय तो बहुत गरीब था। रुपया खर्च करने की शक्ति थी नहीं। इससे विचार करते करते उसने निश्चय किया कि कोई खाने की चीज लेता चलूँ तो अच्छा है। वह कहीं से ईख के कुछ टुकडे ले आया और उनको एक

फटे कपड़े में बाँध कर धारा नगरी को चल दिया । वह दूसरे दिन वहाँ पहुँच गया ।

राजा भोज की सभा के स्थान में वह जाकर ठहर गया । मार्ग चलते चलते वह बहुत थक गया था इससे नींद आने लगी । वहाँ जो मनुष्य थे उनसे उसने पूछा कि भाई ! मैं यहाँ सो जाऊँ ? और कृपा करके यह खयाल रखना कि जब सभा में सब मनुष्य आ जावें तब मुझे जगा देना । वहाँ के मनुष्यों ने कह दिया कि सो जाओ । सोते समय वह अपने ईख के टुकड़ों को सिर के नीचे रखकर सो गया । उसके सो जाने पर वहाँ के मनुष्यों न उसके सिर के नीचे से ईख के टुकड़ो की पोटली निकालने का विचार किया । धीरे से पोटली निकालकर उन्होंने उस पोटली में से वे टुकड़े तो निकाल लिये और लकड़ी के छोटे छोटे टुकड़े पोटली में बाँध दिये । फिर वह पोटली वहीं सिर के नीचे रख दी ।

जब सभा मनुष्यों से भर गई तब एक मनुष्य ने उसको जगा दिया । वह घबरा कर उठा और अपनी पोटली लेकर सभा में पहुँचा । उसने सबके देखते हुए वह पोटली राजा भोज के सामने खोल दी । वह तो यही समझता था कि इसमें ईख के टुकड़े हैं पर पोटली के खुलते ही उसमें से लकड़ी के टुकड़े निकले । लकड़ी के टुकड़े देख कर सब लोग अचम्भा करने लगे कि यह क्या ! राजा भोज भी अपने सामने लकड़ी के टुकड़े देख कर गुस्सा करने लगा ।

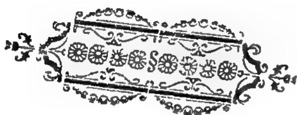
वह ब्राह्मण भी ईख के टुकडो की जगह लकडी के टुकडे राजा के सामने देख कर डर गया। राजा के मन का विचार और ब्राह्मण को डरता हुआ देख कर कालिदास कहने लगा कि महाराज! इस ब्राह्मण का लकडी के टुकडे आपके पास रखने का यह मतलब है—

दग्ध खाण्डवमर्जुनेन बलिना रम्यद्रुमैर्भूषित
दग्धा वायुसुतेन हेमनगरी लका पुन स्वर्णभू ।
दग्धो लोकसुखो हरेण मदन किं तेन युक्त कृत
दारिद्रय जनतापकारकमिद येनापि दग्ध न हि ॥

अच्छे अच्छे वृक्षो से शोभायमान खाण्डव वन को, आग लगा कर, अर्जुन ने जला दिया। सुवर्ण की लका जो सब रत्नों से भरी हुई थी उसको हनूमान् ने भस्म कर दिया। सर्वप्रिय कामदेव को महादेवजी ने जला दिया। परन्तु जो सब को दुख देनेवाली गरीबी है उसको आज तक किसी ने भस्म नहीं किया। इस ब्राह्मण का यह मतलब है कि इन लकडी के टुकडों से मेरी दरिद्रता भस्म कीजिए।

कालिदास की बुद्धिमत्ता को धन्य है! कालिदास के कहने से राजा का क्रोध बिलकुल जाता रहा। उसने खुशी से उस ब्राह्मण को खूब रुपया दिया। जब ब्राह्मण को रुपये मिल गये तब वह पीछे की ओर देखने लगा। राजा पूछने लगा कि अरे ब्राह्मण! तूने पीछे की ओर क्यों देखा? उसने कहा कि महाराज! मैं पीछे इस लिए देखने लगा हूँ कि बहुत

दिन से मेरे पीछे गरीबी लगी हुई है वह आप से पाये हुए
रुपयों के मिलन से दूर हुई कि नहीं। ब्राह्मण की बात सुन
र सब लोग हँसने लगे।



सोलहवां परिच्छेद

फूलो की परीक्षा

एक दिन राजा भोज ने अपने मन मे विचार किया कि हमारी सभा मे पण्डित बहुत हैं। ये भी अत्यन्त चतुर हैं। आज मैं इनकी चतुरता की परीक्षा करना चाहता हूँ। यह विचार कर राजा ने एक माली को बुलवाया और उसने कहा कि तुम एक नकली फूलों का हार बना लाओ। उसने घर जाकर नकली फूलो का हार बना लिया और वह राजा के पास लाया। वह हार देखने मे बिलकुल असली ही मालूम होता था। जो कोई उसको देखता यही कहता था कि असली हार है। राजा ने नक़ली हार देख कर माली से कहा कि एक दूसरा हार असली फूलो का भी बना लाओ। वह असली हार भी बना लाया। अब दोनों हारों में कोई फर्क मालूम नहीं पडता था। देखने से कोई यह नहीं कह सकता था कि असली कौन है और नकली कौन है। जब तक कोई उन हारों को हाथ

में न लें तब तक दूर से असली और नक़ली बता देना बड़ी चतुरता का काम था। कोई नहीं बता सकता था।

सभा में जब सब पंडित इकट्ठे हो गये तब राजा भोज ने अपने एक नौकर को आज्ञा दी कि दोनों हार हाथ में लेकर सभा में खड़ा हो जा। वह उन दोनों हारों को हाथ में लेकर खड़ा हो गया। राजा ने सभा के सब पंडितों से कहा कि देखो ये दो हार हैं, इनमें एक तो असली है और एक नक़ली। आप लोग बिना हाथ से छुए बतलाइए कि कौन सा ार असली फूलों का है और कौन सा नक़ली?

उन हारों को देख कर सब चकित हो गय। दोनों हार एक ही मालूम होते थे। उनमें असली और नक़ली का भेद ता देना मुश्किल काम था। कोई न बता सका। थोड़ी देर ाद कवि-शिरोमणि कालिदास ने कहा कि राजन्! यहाँ ंधेरा है, मुझे हार ठीक ठीक दिखलाई नहीं देते। यदि ाप इस मनुष्य को बाहर खड़ा होने की आज्ञा दें तो मैं ख कर बतला सकता हूँ कि कौन सा हार असली है और ौन सा नक़ली।

राजा भोज की समझ में उस समय कालिदास की चतुाई का कुछ भी खयाल न हुआ। उसने नौकर को आज्ञा दे ा कि तुम बाहर प्रकाश में खड़े हो जाओ। बाहर होते ही धुलोलुप मक्खियाँ असली फूलों के हार पर बैठने लगीं और नक़ली हार पर एक भी न बैठी। यह देखते ही कालिदास ने

कह दिया कि राजन् ! देखिए, जिस हार पर मक्खियाँ बैठ हुई हैं वह असली हार है और जिस पर एक भी मक्ख नहीं है वह नकली है ।

कालिदास की इस चतुरता को राजा ने और सभा में बैठ वाले सभी मनुष्यों ने प्रशंसा की । राजा भोज ने यह का हँसी के लिए किया था । वह कालिदास की प्रशंसा कर हुआ बड़ा खुश हुआ ।



सत्रहवां परिच्छेद

एक ब्राह्मणी

एक दिन राजा भोज अपने सिंहासन पर बैठे हुए थे। द्वारपाल आया और राजा को दण्डवत् करके कहने लगा कि महाराज एक विदुषी ब्राह्मणी आई है। वह आप के दर्शन करना चाहती है। राजा ने आज्ञा दी कि आने दो।

ब्राह्मणी राज दरबार में पहुँची तब राजा ने ब्राह्मणी को ाम किया और उसने राजा को आशीर्वाद दिया। आशीर्वाद जाने के बाद वह अपना बनाया हुआ एक श्लोक पढ़ने ी। उस श्लोक का तात्पर्य यह था कि —

हे राजा भोज! आप के प्रताप को धन्य है। आपके प्रताप

का अपूर्व अग्नि पर्वतों के कटक-स्थानों में जाग रहा है। उस प्रतापरूप अग्नि के प्रवेश करने से आपके सब शत्रु-राजाओं के घरों के आँगनों मे तिनके जम गये हैं। अर्थात् आपका प्रताप ऐसा है जिससे सब शत्रु नष्ट हो गये, उनके मकान खाली पड़े हैं। मकान में कोई भी रहने वाला नहीं है। जब मकान में कोई नहीं रहता तब घास जम जाती है।

वृद्धा ब्राह्मणी का श्लोक सुन कर राजा बड़ा खुश हुआ। उसने उस ब्राह्मणी को एक अशर्फियों का भरा हुआ कलश दिया। फिर खजानची ने धर्मपत्र लिख दिया कि राजा भोज ने इस वृद्ध ब्राह्मणी को, प्रताप की स्तुति करने पर खुश होकर, राजसभा में सुवर्णमणियों से भरा हुआ यह घड़ा दिया है।

राजा भोज के समय मे स्त्रियाँ भी बड़ी विदुषी थीं। स्त्रियाँ भी विद्या पढ़ लिख कर अपनी सन्तान को अच्छी तरह सुधारती थीं। स्त्रियों के पढ़े-लिखे बिना देश का कल्याण होना असम्भव है।



अठारहवाँ परिच्छेद

कवि कालिदास का अनादर

राजा भोज की सभा मे जितने कवि रहते थे उन सब मे राजा भोज कालिदास को सब से अच्छा समझते थे, वह उसी से अधिक प्रीति भी करते थे। एक बार ऐसा हुआ कि भोज किसी विशेष दुर्व्यसन के कारण कालिदास से नाराज हो गये। उनके मन में विचार हुआ कि किसी भी मनुष्य को, और विशेपतया विद्वान् को, कभी किसी दुर्व्यसन में न फँसना चाहिए। इसीसे धीरे धीरे कालिदास से भोज ने उदासीनता प्रकट करनी शुरू कर दी। उनके पास के बैठने-उठने वालों को भी मालूम हो गया कि राजा भोज कालिदास से उदासीनता करने लगे हैं। उन्होंने कहा —

गुणी मनुष्यों में किसी तरह की बुराई देख कर भी गुणों से प्रीति रखने वाले मनुष्य को दुख नहीं मानना चाहिए।

गुणग्राही को चाहिए कि वह उसके गुणों का ख़याल करे, बुराई कभी न देखे । जिस तरह कलंकयुक्त होने पर भी चन्द्रमा को समस्त संसार प्रीतिपूर्वक ही देखता है ।

इस तरह समझाने बुझाने पर भी राजा भोज कालिदास की ओर से सन्तुष्ट न हुए, उनकी पूर्व की सी प्रीति न हुई। होते होते कालिदास को भी राजा का मतलब मालूम हो गया । वह भी समझ गया कि राजा मुझ से नाराज रहते हैं।

एक दिन कालिदास ने तराज़ू का बहाना करके राजा के सामने यह श्लोक पढा —

प्राप्य प्रमाणपदवीं को नामास्ते तुलेऽवलेपस्ते ।
नयसि गरिष्ठमधस्तात्तदितरमुच्चैस्तरां कुरुपे ॥

हे तराज़ू ! प्रमाण—माप—(मान) का दरजा पाकर तुझे घमंड क्यों है ? तू गरिष्ठ अर्थात् बड़े (भारी) को नीचे कर देती है, तेरा वजनी पलरा नीचे हो जाता है और हलका ऊपर को उठ जाता है ।

इसके बाद दूसरा श्लोक कहा —

यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मात्
स्वदेशरागेण हि याति खेदम् ।
तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणा
क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति ॥

अर्थात् जिसकी सब जगह गति है, जो सब जगह जा आ सकता है वह अपने देश में प्रीति करके दुख क्यों पाता है। यह कुआ हमारे पिता का बनवाया हुआ है—इस तरह कह

कर कायर मनुष्य उसका खारी पानी पीते रहते हैं । बुद्धिमान् ऐसा काम कभी नहीं कर सकता ।

इसके बाद कालिदास अच्छी तरह समझ गया कि राजा हम से जरूर नाराज हैं । हमारा तिरस्कार करते हैं । यह विचार कर वह उदास होकर अपने घर चला गया । क्योंकि—

तिरस्कार करने से जिसका प्रेम घट जाता है उस प्रेम को फिर पूरा कौन कर सकता है ? जो मोती एक बार टूट गया वह फिर लाख का लेप करने से जुड नहीं सकता ।

परस्पर प्रेम न रहने से और कालिदास की उदासीनता जान कर राजा भोज के मन मे भी दुख हुआ । वह भी उदासीन रहने लगा ।

एक दिन रानी लीलावती ने राजा भोज को उदासीन देख कर पूछा कि आप उदास क्यों रहते हैं ? भोज ने अपना और कालिदाससम्बन्धी सब हाल कह सुनाया । हाल सुनते ही रानी समझ गई कि राजा कालिदास का तिरस्कार करते हैं । उसने कहा—हे देव ! प्राणनाथ ! आप सर्वज्ञ हैं, आप सब कुछ जानते-समझते हैं तोभी सुनिए —

स्नेहो हि परमघटितो न वर सजातविघटितस्नेह ।
हृतनयनो हि विषादी न विषादी भवति जात्यन्ध ॥

ससार मे किसी से भी प्रेम न करना अच्छा है । यदि किसी से प्रेम (मित्रता) हो जाय तो फिर उससे तोडना अच्छा नहीं । जिसकी आँखें नष्ट हो जाती हैं, दिखाई नहीं

देता तो उसे बड़ा दुख होता है। अगर वह जन्म से ही अन्धा है तो उसे कुछ भी दुख नहीं होता।

कालिदास सरस्वती का अवतार है। सब तरह से इस से प्रेम करो। ऐसा उपाय करो जिससे यह फिर आप से प्रेम करने लगे। देखो—

चन्द्रमा दोषाकर—क्षपाकर—कुटिल है अर्थात् टेढा है, उसमें कलक भी है, और वह अपने मित्र के अन्त समय अर्थात् सूर्य के छिप जाने पर उदय होता है। ऐसा होते हुए भी वह शिवजी का प्रिय है। अपने शरण में अर्थात् अपने पास रहने वालों के गुण-दोषों का विचार न करना चाहिए।

रानी लीलावती के समझाने से भोज की बुद्धि ने पलटा खाया। उसने कहा कि तुम जो कुछ कहती हो सब ठीक है। मैं कल सबेरे ही कालिदास को खुश करने का उपाय करूँगा।

- प्रात काल होते ही राजा अपने जरूरी कामों से निपट कर सभा में गये। उस वक्त पण्डित, कवि और गवैये आदि सब लोग सभा मे आये पर कवि कालिदास न आये। उनको न देख कर राजा ने अपने एक नौकर को हुक्म दिया कि कवि कालिदास को बुला लाओ। वह गया और कालिदास को प्रणाम करके कहने लगा कि हे कवीन्द्र। राजा भोज आपको बुलाते हैं। उनको चिन्ता हुई की राजा ने कई दिन हुए तब तो मेरा तिरस्कार किया था अब वह मुझे सबेरे ही क्यों बुलाते हैं। सच है—

राजा की सभा मे जो जो मनुष्य उसका परम प्रिय है, राजा का जिस पर प्रेम है, पास रहने वाले उसी उसी मनुष्य को उखाडने का प्रयत्न करते हैं। वे चाहते हैं कि राजा के परम प्रिय मनुष्य न रहने पावें।

राजा भोज की मेरे साथ बडी प्रीति थी, इसी से मेरा मान भी बढता जाता था। वह कुटिल मनुष्य को असह्य हुआ। इसी से ईर्ष्या करके लोगों ने मुझ मे और राजा मे वैर का अकुर बो दिया।

जो राजा ज्ञानी नहीं होता, जो अच्छी तरह समझता नहीं वह चतुर मत्रियों के वश मे रहता है। और जिस राजा के पास दुष्ट मनुष्यों का जोर होता है वहाँ किसी बात के लिए सज्जनों को अवसर कैसे मिल सकता है। वहाँ सज्जन किसी सूरत में नहीं रह सकता।

इस तरह विचार करते हुए कालिदास सभा मे आये। उनको आते देख कर राजा को बडी खुशी हुई। वे आसन से उठ खडे हुए और कहा कि सुकवे! आपने आज इतनी देर क्यो की? इस तरह कहते हुए भोज आगे बढे अर्थात उनकी पेशवाई की। राजा को देख कर सभा में जितने मनुष्य बैठे थे वे भी उठ खडे हुए और यह हाल देख कर उनको आश्चर्य हुआ। जो लोग कालिदास के विरोधी थे उनको तो बडा ही दुख हुआ।

राजा कालिदास के हाथ में हाथ डाल कर अपने सिंहा-

सन की जगह लिवा लाये। उनको उसी सिंहासन पर विठा दिया और उनकी आज्ञा पाकर खुद भी वहीं वैठ गये।

इस तरह कालिदास की प्रतिष्ठा होते हुए देख कर कुछ लोगो के मन मे बड़ी ईर्ष्या हुई। वे कालिदास की प्रतिष्ठा न देख सके। वे परस्पर मिल कर ऐसा उपाय सोचने लगे जिससे राजा मे और कालिदास मे फिर भी अनवन हो जावे। होते होते उन लोगो ने एक ऐसा निकृष्ट उपाय सोचा जिससे राजा में और कालिदास मे अनवन करा ही दी। राजा उनसे वडे नाराज हो गये। यहाॅं तक कि उन्होने कालिदास से कह दिया कि तुम हमारे राज्य में न रहो, कहीं वाहर चले जाओ। साथ ही यह भी कह दिया कि हम जवाब कुछ नहीं चाहते।

कालिदास वहाॅं से चल दिये और विचारने लगे —

अघटितघटितं घटयति सुघटितघटितानि दुर्घटीकुरुते।
विधिरेव तानि घटयति यानि पुमान्नैव चिन्तयति॥

अर्थात् अघटितघटनापटु भगवान् अनहोनी बातों को होनहार कर देता है और होनहार बातों को अनहोनी कर देता है। मनुष्य जिस बात को कभी नहीं सोचता या विचारता कि यह बात होगी वही सामने आजाती है।

मालूम होता है, यह सब कृत्य मेरे दुश्मनो का किया हुआ है। सच है—थोड़ा सार रखने वाले बहुतों का इकट्ठा होना भी मजबूत वन जाता है। तिनकों से रस्सी बनाई जाती है फिर उसी रस्सी से हाथी बाॅंधे जाते हैं।

य कालिदास देश से निकल गया तब रानी लीलावती ने भी सुना। उसने राजा से कहा—हे देव! कवि कालिदास के साथ तो आपकी बडी मित्रता थी। अब उनसे क्यों बिगड गई? ऐसा क्या सबब हुआ जिससे आपने उनको देश से भी निकाल दिया? देखो—

जिस तरह ईख के आगे के हिस्से के नीचे क्रमपूर्वक रस बढता जाता है, गन्ने के नीचे के हिस्से मे रस अधिक होता जाता है, उसी तरह सज्जनो की प्रीति बढती जाती है। दुष्ट मनुष्यो की प्रीति इसके विपरीत होती है अर्थात् घटती जाती है।

शोकरूपी शत्रु से रक्षा करनेवाला, प्रीति और विश्वास का पात्र ऐसा 'मित्र' यह दो अक्षर का शब्दरूपी रत्न किसने बनाया है! मतलब यह कि यह 'मित्र' रूपी रत्न सब रत्नों से बडा है।

लीलावती की बातें सुन कर राजा भोज, कालिदास के विरुद्ध जो कुछ बातें जानता था वे सब उसने कह सुनाईं। राजा की बातें सुन कर लीलावती को बडा दुःख और आश्चर्य हुआ। उसने ईश्वर को साक्षिरूप बना कर कालिदास की ओर से राजा का मन बिलकुल शुद्ध कर दिया। उन्होंने अच्छी तरह समझ लिया कि कालिदास निर्दोष हैं।

अब भोज के मन मे बडी चिंता हुई। वे रात-दिन सुस्त रहने लगे। न किसी से बोलते और न किसी से बात-चीत

करते। वे रात-दिन विलाप करते हुए कहते थे कि मुझमे लज्जा क्या है, मुझमे चतुराई क्या है, मुझमे गभीरपन क्या है अर्थात् कुछ नहीं। वे कालिदास के लिए पछताते हुए कहते थे—हा कवियो के मुकुट के मणिरूप कालिदास ! हा मेरे प्राण-प्रिय ! मैंने तुम्हारे साथ बडा अनर्थ किया। जो बात तुमसे कभी भी न कहनी चाहिए थी सो कही। मैंने तुम्हारा बडा अनादर किया, तुम सर्वथा निर्दोष हो और मैं सदोष हूँ, मैं ही अपराधी हूँ, जो तुमको मैंने इतना कष्ट दिया। इस तरह कालिदास के लिए विलाप करते हुए वे बडे दुखी रहने लगे।

राजा भोज जब अपनी सभा मे जाते तब विना कालिदास के सभा मे कुछ भी न मालूम होता था। उन्हे वह सभा ऐसी मालूम होती थी जैसे विना चद्रमा के रात हो। उस सभा में ऐसा एक भी मनुष्य न था जिसकी कविता राजा भोज के मन को खुश करनेवाली हो।

एक दिन राजा भोज बैठे हुए थे। रात का समय था। चाँदनी खिल रही थी। उस चद्रिका को देख कर राजा अपने मन मे बडे खुश हुए। रानी लीलावती के मुँह के समान प्रकाशमान चन्द्रमा को देखकर उन्होंने उसी समय एक आर्या कविता की जिसका मतलब यह है कि —"यह चन्द्रमा मेरी रानी लीलावती के मुँहरूपी चन्द्रमा की बराबरी करता है" इतना कह कर वे सो गये। जब सवेरा हुआ तब वे सोते

से उठे और उठकर, नित्य कर्म करने के बाद अपनी सभा में गये। वहाँ जाकर सब कवियों को बुलाया और उनसे कहा —

तुलग्र अणु अणुसरइ ग्लौसो मुहच दस्स खु पदाए ।

यह मेरी समस्या है। यदि आप इसको पूरा कर दें तो अच्छा है। अगर यह समस्या पूरी न हुई तो आप लोग मेरे देश में नहीं रह सकते। या तो समस्या पूरी कीजिए या देश छोड़ कर चले जाइए।

उस वक्त तो सब कवि अपने अपने घर चले गये। फिर सब कई दिन तक विचार करते रहे पर किसी से भी समस्या न बन सकी। जब एक से भी पूरी कविता न बन सकी और कई दिन बीत गये तब वे इकट्ठे होकर सोचने लगे कि क्या करना चाहिए। अन्त में यह निश्चय हुआ कि राजा के पास बाण पण्डित को भेज कर कुछ अवधि माँगनी चाहिए। ऐसा ही हुआ। बाण पण्डित राजा के पास गया और उनसे कहा कि हे राजन्। सब कवियों ने मिलकर मुझे आप की सेवा में भेजा है कि आप समस्या पूरी करने के लिए आठ दिन की अवधि दीजिए। राजा ने कहा अच्छा, अगर आठ दिन में समस्या पूरी न हुई तो सब कवियों को देश छोड़ देना होगा। बाण कवि ने आकर राजा की स्वीकृति सब कवियों को सुना दी। इसके बाद सब अपने अपने घर चले गये। होते होते आठ दिन भी बीत गये पर कविता कोई भी पूरी न कर सका। आठवें दिन की रात को सब कवि इकट्ठे हुए। उस वक्त बाण

कवि ने कहा कि आपही लोगों ने अपने घमड से, राजसम्मान के घमड से और कुछ विद्या के घमड से, कविशिरोमणि कालिदास को यहाँ से निकलवा दिया । साधारणरूप से आप लोग सभी कवि और पण्डित हैं, साधारण कविता सब कर सकते हैं पर विषम—कठिन—कविता करने में तो वही एक कवि कालिदास समर्थ हैं । उनके बिना कठिन समस्या की पूर्ति कौन कर सकता है । उसको तो आपने निकाल दिया । अब आप लोगो का क्या बडप्पन रह गया । यदि इस वक्त यहाँ कालिदास होते तो यह आपत्ति क्यो भोगनी पडती । उनके रहते क्यों यह देश छोडना पडता । अब आप लोगों को उनके निकलवाने का मजा मिला है ।

सच तो यह है कि जिनकी ससार मे प्रतिष्ठा है, जो विद्वान् हैं, जो आदर-सत्कार के योग्य हैं उनके साथ जो ईर्ष्या-द्वेष करता है उसका कुल ही नष्ट हो जाता है ।

इसके बाद सब कवि बडे दुखी हुए । कालिदास के लिए सब विलाप करने लगे । फिर सब शान्त होकर कहने लगे कि आज आखिरी दिन है, कालिदास के बिना कोई भी समस्या पूरी नहीं कर सकता । क्योंकि —

योद्धाओं की युद्धभूमि में और कवियों के कविमडल मे जीत या हार दो ही घडी में मालूम हो जाती है ।

अब अगर आप लोगों की राय हो तो आज ही आधी

चलो । अब इस देश को छोड़ देना ही अच्छा है और अगर अपने आप न छोड़ोगे तो प्रातःकाल होते ही राजकर्मचारी हमको तथा हमारे बाल-बच्चों को यहाँ से निकाल देंगे ।

इस तरह सोच विचार कर वे सब कवि अपने अपने घर गये और सब सामान साथ ले गाड़ियों पर लाद कर वहाँ से चल दिये ।

ये सब कवि उसी रास्ते में जा रहे थे जहाँ धारा से दूर कालिदास रहते थे । उनको इनकी आवाज सुनाई दी । वे जान गये कि ये कवि लोग कहीं जा रहे हैं । उन्होंने एक मनुष्य भेजा कि देखो तो ये लोग कौन जा रहे हैं । उसने वापस आकर कहा कि ये राजा भोज के कवि हैं ।

सच है, तालाब की जो शोभा एक राजहंस से होती है वह उसके चारों ओर रहने वाले हजार बगलों से नहीं हो सकती ।

अब कालिदास ने विचार किया कि इन जाते हुए पण्डितों की रक्षा जरूर करनी चाहिए । क्योंकि जो मनुष्य दूसरे मनुष्यों की रक्षा नहीं करता उसके बल से कुछ नहीं, जो धन अतिथि को नहीं दिया जाता वह धन धन नहीं, जो अपनी भलाई करने वाली नहीं वह क्रिया कुछ भी नहीं । जो सज्जन मनुष्यों से द्वेष रक्खे उसका जीवन व्यर्थ ही है ।

यह विचार कर कालिदास ने अपना वेष बदल लिया और वे तलवार लेकर वहाँ से चल दिये । आध कोस के फासले

पर वे सब जाते हुए मिले । ये उनके सामने जा कर खडे हुए और उनको आशीर्वाद दे कर बोले—

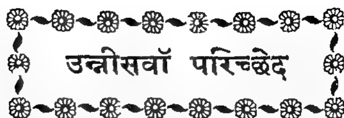
आप विद्या मे समुद्ररूप हैं, आप लोग राजा भोज की सभा मे बृहस्पति की तरह बडा महत्व पाने वाले हैं। आप लोग इकट्ठे हो कर कहाँ जाना चाहते हैं ? कहिए, आप लोग प्रसन्न तो हैं ? राजा भोज तो आनन्दपूर्वक हैं ? इसके बाद कालिदास ने कहा कि मैं राजा भोज से धन पाने की इच्छा से उनके दर्शन करने के लिए काशी से आया हूँ । कालिदास के धन पाने की इच्छा सुनकर सब कवि हँसने लगे और वहाँ से आगे बढने लगे । उन लोगो में एक कवि बडा समझदार था। वह खडा हो कर कहने लगा कि आप हम लोगो की बात पीछे से भी सुनेंगे इसलिए मैं अभी बतला देना उचित समझता हूँ । बात यह है कि राजा भोज ने एक समस्या हम लोगों को पूरी करने के लिए दी थी। वह समस्या हम मे से कोई भी पूरी न कर सका, इसलिए राजा भोज नाराज हो गये और उन्होंने अपने देश से हमको निकाल दिया। कालिदास तो बडे चतुर थे । उन्होंने कहा कि वह समस्या क्या थी सो तो सुनाओ । उस पण्डित ने समस्या सुना दी । समस्या सुनते ही कालिदास उसका सारा मतलब समझ गये । उन्होने कहा कि राजा भोज ने चन्द्रमा का पूर्णमण्डल देख कर यह गूढ समस्या कही है । इसके आगे का हिस्सा इस तरह होना चाहिए —

अणु इदि यण्णयदि कह अणाविदि तस्स पडिपदि चदस्स।

मतलब यह कि उस प्रतिपदा के चन्द्रमा की और उस सुखरूपी चन्द्रमा की बराबरी किस तरह हो सकती है अर्थात् मुँह तो सदा पूर्ण चन्द्रमा के तुल्य है और चन्द्रमा पड़वा के दिन एक ही कला वाला रह जाता है फिर बराबरी किस तरह हो सकती है?

इस समस्यापूर्ति को सुनते ही सब कवि विस्मित हो गये। धर कालिदास समस्या कह कर उन सब को प्रणाम करके वहाँ चल दिये। वे पण्डित आपस में कहने लगे कि यह मनुष्य साक्षात् सरस्वतीरूप मालूम होता है। मालूम होता है, हमारी रक्षा के लिए ही आया था।

अब वे सब वहाँ से अपने अपने घर को लौट आये। सब सलाह की कि सवेरा होते ही राजा भोज की सभा में ना चाहिए और यह समस्या उनको सुनानी चाहिए। होंने वैसा ही किया। सवेरा होते ही सब इकट्ठे होकर सभा गये और राजा को आशीर्वाद देकर बैठ गये। फिर बाण ने राजा से कहा कि हे सर्वज्ञ! आपने जो समस्या कहीं उसका पूरा पूरा मतलब तो ईश्वर जानता होगा, हम न क्या जान सकते हैं, फिर भी कुछ कहा जाता है। ने पूरी की हुई समस्या सुना दी। समस्या को सुनते ही को सन्देह हो गया कि यह समस्या इन लोगों की बनाई नहीं है। मालूम होता है, आस पास कहीं कालिदास



उन्नीसवाँ परिच्छेद

विलोचन कवि का कुटुम्ब



क दिन राजा भोज की सभा में विलोचन नाम कवि अपने कुटुम्ब के साथ आया। वह आकर वह चुपचाप खड़ा हो गया। उसको देखकर राजा भोज ने कहा —

"बड़े आदमियों के कामो की सिद्धि शरीर ही में हुआ करती है, सासारिक सामान मे नहीं"।

वह कवि पूरा कवि तो था ही, पर चतुर भी अव्वल दरजे का था। राजा की बात सुन कर वह श्लोक बना कर फौरन पढने लगा —

> घटो जन्मस्थानं मृगपरिजनो भूर्जवसनो-
> वने वास कन्दादिकमशनमेवंविधगुण ।
> अगस्त्य पाथोधिं यदकृत कराम्भोजकुहरे
> क्रियासिद्धि सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

जिसका जन्म तो घड़े से हुआ है, और कुटुम्बी हरिण आदि हैं अर्थात् हरिण आदि को ही जो कुटुम्बी मानता

जिसके कपड़े भोज-पत्र के हैं, जो सदा वन मे रहता है, और कन्दमूल खाकर ही अपना निर्वाह करता है ऐसे गुणो वाला अगस्त्य मुनि समुद्र को सोख गया । इसलिए सिद्ध है कि महान् पुरुषों के कामों की सिद्धि शरीर ही में होती है, सासारिक सामान से नहीं ।

चतुरता से भरे हुए कवि का श्लोक सुनकर राजा भोज बड़े खुश हुए। उन्होंने खुश होकर कवि का अच्छी तरह आदर-सत्कार किया और उनको बहुमूल्यवान् रत्न आदि देकर सन्तुष्ट किया।

विलोचन कवि के साथ उनकी स्त्री भी थी । वह भी बड़ी विदुषी थी । उसे देख कर राजा ने कहा कि हे मात, आप भी कुछ कहिए । वह भी तत्काल कहने लगी —

रथस्यैकं चक्रं भुजगयमिता सप्त तुरगा
निरालम्बो मार्गश्चरणविकल सारथिरपि ।
रविर्यात्येवान्तं प्रतिदिनमपारस्य नभस
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

अर्थात् सूर्य के रथ का पहिया एक है, पर उसके घोड़े सात और वे भी साँपों से बँधे हुए । उसका रास्ता आकाश में है उसका सारथि पंगुल है । ऐसा होते हुए भी सूर्य रोज आकाश में घूम जाता है । इससे मालूम हुआ कि जो हैं उनके कामों की सिद्धि शरीर ही में होती है, सामानों से नहीं ।

स्त्री की कविता सुन कर राजा भोज और भी अधिक खुश हुए और उन्होने उसको भी आदरपूर्वक मूल्यवान रत्न आदि देकर खुश किया ।

कवि के साथ उसका पुत्र भी था । वह भी वडा विद्वान् था । राजा भोज ने जब उसे देखा तब उससे भी कहा कि हे वटुक ! तुम भी कुछ सुनाओ। उसने भी तत्काल ही कहा :

> विजेतव्या लङ्का चरणतरणीयो जलनिधि-
> र्विपक्ष पौलस्त्यो रणभुवि सहायाश्च कपय ।
> पदातिर्मर्त्योऽसौ सकलमवधीद्राक्षसकुल
> क्रियासिद्धि सत्वे भवति महता नोपकरणे ॥

मतलब यह कि लङ्का का विजय करने के लिए मार्ग में समुद्र पडता है वह अपने पैरो से तैर कर पार किया । वहाँ लङ्का मे पुलस्त्य ऋषि का पुत्र रावण प्रवल शत्रु था, सग्रामभूमि मे सहायता करने वाले केवल वन्दर ही थे और रामचन्द्र पैदल चलने वाले मनुष्य ही थे, इस प्रकार युद्ध का सामान अच्छी तरह न होते हुए भी वल्कि वहुत ही कम होने पर भी रामचन्द्रजी ने वहाँ के समस्त राक्षस-कुल को मार गिराया और नष्ट कर दिया । इससे सिद्ध हुआ कि वडे मनुष्यों की सिद्धियाँ शरीर ही से होती है, सामान से नहीं

कवि के पुत्र का भी श्लोक सुनकर राजा भोज वडा खुश हुआ और उसे भी वहुमूल्य रत्न आदि देकर सन्तुष्ट किया ।

कवि के कुटुम्ब के साथ उसके पुत्र की स्त्री भी थी। उसकी उम्र कम थी और वह लज्जावती भी अधिक थी। उसे देख कर राजा भोज ने उससे भी कहा कि हे मात, आप भी कुछ सुनाइए। वह भी खूब पढ़ी-लिखी थी, उसने तत्काल कहा —

धनु पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी चञ्चलदृशां
दृशां कोणो बाणः सुहृदपि जडात्मा हिमकरः ।
स्वयं चैकोऽनङ्गः सकलभुवनं व्याकुलयति
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

अर्थात् जिसका फूल-रूप धनुष है, भौंरा-रूप जिसकी प्रत्यञ्चा है, चञ्चल नेत्रवाली स्त्रियों के नेत्र-कोण ही जिसके बाण हैं, जिसका मित्र जड चन्द्रमा है और वह स्वयं अंगरहित है अर्थात् उसके अंग कोई भी नहीं है, ऐसा केवल कामदेव ही समस्त संसार को व्याकुल कर देता है अर्थात् अपने वश में किये हुए है। इससे मालूम हुआ कि बड़ों के कामों की सिद्धियाँ उनके प्रताप से ही हो जाती हैं। उनकी सिद्धियों के लिए सांसारिक सामान की जरूरत नहीं।

कवि की पुत्रवधू की कविता सुन कर उस समय सभा में जितने मनुष्य बैठे हुए थे वे तथा राजा सभी बड़े चकित हो गये। राजा भोज ने प्रसन्न होकर उसको अपनी रानी लीलावती के रत्नजटित बहुत आभूषण दिये और उसकी बड़ी प्रशंसा की।

विलोचन कवि तथा उसके कुटुम्ब को अत्यन्त विद्वान् समझ कर राजा भोज ने उन सबको अपने राज्य में रहने के लिए जगह दिला दी। वे सब वहाँ रहने लगे।

वह समय धन्य था जब कि इस देश में विद्या का इतना अधिक प्रचार था। सब लोग ऐसे विद्वान् हुआ करते थे। एक घर मे यदि सभी विद्वान् हों तभी आनन्द होता है। यदि कुछ विद्वान् हुए और कुछ मूर्ख, तो अच्छा सुख नहीं मिलता।



बीसवां परिच्छेद

कुम्हार की उदारता

एक दिन राजा भोज के यहाँ एक कुम्हारी आई और द्वारपाल से कहने लगी कि मैं राजा के दर्शन करना चाहती हूँ। द्वारपाल ने कहा—तेरा क्या काम है, राजा से क्यों मिलना चाहती है ? उसने उत्तर दिया कि मैं तुमको कदापि न बतलाऊँगी, वह काम राजा से ही कहने का है। द्वारपाल सभा में गया और राजा भोज से कहने लगा कि राजन्! एक कुम्हारी आपके दर्शन करना चाहती है। मैंने उससे पूछा कि तेरा क्या काम है किन्तु उसने काम मुझे नहीं बतलाया, आपसे ही निवेदन करना चाहती है। राजा ने कहा, अच्छा उसे भेजो। कुम्हारी आई और नमस्कार करके कहने लगी —

हे राजन्! मिट्टी खोदते हुए मेरे स्वामी को एक खजाना मिला है। वह इस वक्त वहीं बैठा हुआ उसकी रक्षा कर रहा है, और मैं आप से निवेदन करने के लिए आई हूँ।

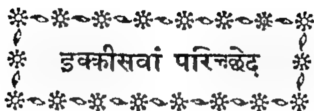
खजाने का हाल सुन कर राजा को आश्चर्य हुआ। उसने अपने नौकरों को भेजा कि वहाँ जाकर कलश ले आओ। नौकर ले आये। राजा ने कलश को देखा तो उसके भीतर मणि-मोतियों से युक्त द्रव्य पाया। राजा ने कुम्हार से पूछा कि यह क्या है? कुम्हार ने कहा —

राजचन्द्र समालोक्य त्वां तु भूतलमागतम् ।
रत्नश्रेणिमिषाम्मन्ये नक्षत्राण्यभ्युपागमन् ।

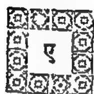
अर्थात् हे राजन! मेरी समझ में तो यह आता है कि आप राजारूप चन्द्रमा को पृथिवी पर आया हुआ देख कर रत्नों के बहाने नक्षत्रों की यह पंक्ति आपको प्राप्त हुई है।

कुम्हार के मुँह से यह उत्तम श्लोक सुन कर राजा बड़ा चकित हुआ। उसने खुश होकर वह सारा खजाना उसी कुम्हार को दे दिया।





राज्य का दान


एक दिन द्वारपाल आकर राजा से कहने लगा कि कवि शेखर नामक महाकवि द्वार पर खड़ा है और आप से मिलना चाहता है। राजा ने कहा कि अच्छा, भेजो। कवि ने आकर आशीर्वाद दिया। फिर कहने लगा —

राजन्दौवारिकादेव प्राप्तवानस्मि वारणम्।
मदवारणमिच्छामि त्वत्तोऽहं जगतीपते॥

हे राजन! 'वारण' (रुकावट) तो मुझे द्वारपाल से ही मिल चुका है अर्थात् द्वारपाल ने आगे बढ़ने से मुझे रोका था। हे जगतीपते! अब 'मदवारण' (मस्त हाथी) की तुमसे इच्छा करता हूँ।

उस वक्त राजा भोज पूर्व को मुँह किये हुए बैठे थे। वे कवि से खुश हो गये और पूर्व देश का सम्पूर्ण राज्य कवि को देने का संकल्प कर लिया इसलिए वे दक्षिण की ओर मुँह करके बैठ गये। कवि विचारने लगा कि यह क्या बात है।

राजा ने तो मुँह फेर लिया। क्या मुझसे नाराज हो गये। वह दक्षिण की ओर, अर्थात् राजा जिस ओर मुँह किय हुए वैठे थे, जाकर पढने लगा कि —

अपूर्वेयं धनुर्विद्या भवता शिक्षिता कथम् ।
मार्गणौघ समायाति गुणो याति दिगन्तरम् ॥

हे राजन्! यह अपूर्व धनुर्विद्या तुमने कहाँ से सीखी जो वाणों का समूह तो पास आता है और गुण अर्थात् डोरी आकाश को जाती है।

कवि की इस वात से भी राजा वडे खुश हुए। उन्होंने उस कवि को दक्षिण देश का भी राज्य दे देने का विचार कर लिया और खुद पश्चिम की ओर मुँह करके वैठ गये। कवि उनका मतलव फिर भी न समझा इसलिए पश्चिम दिशा में उनके सामने जाकर कहने लगा—

सर्वज्ञ इति लोकोऽय भवन्त भाषते मृषा ।
पदमेक न जानीषे वक्तुं नास्तीति याचके ॥

हे राजन्! लोग आपको सर्वज्ञ कहते हैं यह बिलकुल झूठ है क्योंकि आप तो माँगनेवालो के सामने 'नहीं' यह एक शब्द भी नहीं कह सकते।

इसके वाद खुश होकर राजा भोज ने पश्चिम देश का भी कवि को देने का विचार कर लिया। इसलिए वे की ओर मुँह फेर कर वैठ गये। कवि वेचारा अव तक ही रहा। उसने राजा का मतलव अवतक न समझ

पाया । वह उत्तर की ओर भी जाकर उनके सामने कहने लगा —

सर्वदा सर्वदोऽसीति मिथ्या त्वं कथ्यसे बुध ।
नारयो लेभिरे पृष्ठ न वक्ष परयोषित ॥

हे राजन् ! मैंने सुना था कि आप सदा सबको सब कुछ देते हैं लेकिन यह बिलकुल झूठ है क्योंकि शत्रु तुम्हारी पीठ को नहीं पाता और पर-स्त्री तुम्हारे वक्ष स्थल को प्राप्त नहीं कर सकती । अर्थात् तुमने शत्रुओं को कभी पीठ पीछे नहीं किया और तुम पर-स्त्री से प्रेम नहीं करते ।

कवि की ये बातें सुन कर राजा भोज और भी अधिक खुश हुए और उत्तर देश का राज्य भी कवि को दिया हुआ मान उठ कर खड़े हो गये ।

कवि अब तक उनका मतलब न समझा इससे वह फिर कहने लगा —

राजन्कनकधाराभिस्त्वयि सर्वत्र वर्षति ।
अभाग्यच्छत्रसंच्छन्ने मयि नायान्ति बिन्दव ॥

हे राजन् ! आप सब जगह सोने की वर्षा करते हैं पर मेरे ऊपर अभाग्य-रूपी छत्र तना हुआ है, वहाँ तक एक बूँद भी नहीं पहुँचती ।

इसके बाद राजा रनिवास को चले गये । वहाँ जाकर उन्होंने अपनी रानी लीलावती से कहा कि हे देवि ! आज मैंने अपना सारा राज्य एक कवि को दे डाला । अब तू मेरे

के अच्छे होने से, पृथिवी की शोभा आप से और तीनों लोकों की शोभा सूर्य से होती है ।

इसके बाद राजा ने कहा— हे विद्वन् ! आपका मतलब क्या है सो बतलाइए? कवि ने कहा —

अम्बा कुप्यति न मया न स्नुषया सापि नाम्बया न मया ।
अहमपि न तया न तया वद राजन्कस्य दोषोऽयम् ॥

मेरी माता गुस्सा करती है पर मुझ से नहीं, और, न पुत्रवधू से ही । पुत्रवधू भी क्रोध करती है पर मुझ से या मेरी माता से नहीं । मैं भी जब कभी क्रोध करता हूँ तब न माता से न पुत्रवधू से ही । हे राजन् ! अब आप ही बतलाइए कि गुस्सा करने में किसका दोष है?

कवि का मतलब राजा समझ गया । उसने जान लिया कि यह सब दोष गरीबी का है, फिर उसे खूब धन देकर पूर्ण-मनोरथ किया ।



तेईसवां परिच्छेद

माघ कवि

विद्वत्ता मे, दान करने मे और गुणग्राही होने मे जिस तरह राजा भोज ससार मे प्रतिष्ठित हुए उसी तरह माघ पडित भी विद्वत्ता तथा असाधारण दान करने मे ससार मे विख्यात थे। यही नहीं वल्कि किसी किसी वात में माघ पण्डित भोज से भी वढे-चढे थे । माघ का यह नियम था कि कोई भी माँगने वाला द्वार से खाली हाथ न लौटे। वे दान करने में अभूतपूर्व हुए । इसी दान के कारण वे ससार भर मे प्रतिष्ठित हो गये ।

एक दिन राजा भोज ने भी माघ पण्डित की वडी प्रशसा सुनी । इसने भी विचार किया कि माघ का अवश्य दर्शन करना चाहिए। इसने अपने अच्छे समझदार नौकरों को माघ कवि के घर भेजा और उनको आदरपूर्वक अपने नगर में बुलवाया । उनके आने पर राजा भोज ने उनका अच्छी तरह

आदरसत्कार किया और उनके रहने के लिए एक उत्तम मकान बतलाया । यही नहीं किन्तु उनकी सेवा-शुश्रूषा करने के लिए चतुर नौकर नियत कर दिये जिससे उनको किसी तरह का कष्ट न हो ।

माघ कवि बहुत दिन तक धारा नगरी में रहे और उन्होंने आनन्दपूर्वक समय बिताया । रहते रहते जब बहुत दिन हो गये तब वहाँ से उनका मन उचट गया । उनका विचार हुआ कि अपने देश में चलना चाहिए । यह बात राजा भोज को भी मालूम हुई । उन्होंने बहुत मना किया कि आप यहीं रहें, यहाँ आपको किसी तरह का कष्ट न होगा, अब वहाँ न जाइए किन्तु माघ ने तो वहाँ जाना निश्चय कर लिया था अतः उन्होंने जाना ही उचित समझा । चलते समय राजा भोज ने उनको अच्छी तरह दान-दक्षिणा देकर विदा किया।

माघ कवि दान-शूर तो थे ही । वहाँ जाने पर थोड़े ही दिन बाद उनके पास कुछ भी न रह गया । जो कुछ पास था सब दान कर दिया । अब माँगने वालों को क्या दिया जावे ? पास कुछ भी नहीं । उन्होंने विचार किया कि राजा भोज ही अद्वितीय दानी है, उसी के पास जाना चाहिए । वे अपनी स्त्री को साथ लेकर धारा नगरी को चल दिये । वहाँ पहुँच कर नगरी से बाहर एक स्थान पर ठहर गये और एक पत्र लिख कर अपनी स्त्री को दे दिया । स्त्री पत्र लेकर राज-दरबार मे पहुँची ।

राजा भोज दरबार में बैठे हुए थे। द्वारपाल ने कहा—राजन्! गुर्जर देश मे पडित प्रवर माघ आये हैं और नगर के बाहर ठहरे हैं। उन्होंने अपनी स्त्री को भेजा है। वह आपके दर्शन करना चाहती है। राजा ने कहा—अच्छा आने दो। उसने आकर राजा को माघ का लिखा हुआ पत्र दे दिया। राजा उसे पढ़ने लगा। उसमे लिखा था —

कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजषण्ड
त्यजति मुदमुलूक प्रीतिमांश्चक्रवाक ।
उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्त
हतविधिलसितानां हा विचित्रो विपाक ॥

अर्थात सूर्य के उदय होने से और चन्द्रमा के अस्त होने से कुमुदवन की शोभा जाती रही। और, कमलो मे शोभा बढ़ गई। उल्लुओं (पक्षियों) का आनन्द जाता रहा और चकवा प्रसन्न हो गये। इस तरह भाग्यहीनो का कर्मफल विचित्र है।

इस तरह उस पत्र में प्रात काल का वर्णन देख कर राजा भोज ने माघ पण्डित की स्त्री को तीन लाख रुपये खजाने से दिला दिये और कहा कि हे मात ! ये रुपये मैंने तुम्हारे भोजन के वास्ते दिये हैं। मैं प्रात काल माघ पण्डित के दर्शन करने को आऊँगा। मैं उन्हें नमस्कार करके पूर्णमनोरथ करूँगा।

तीन लाख रुपये लेकर माघ पण्डित की स्त्री अपने पति के पास जा रही थी। रास्ते में बहुत से माँगने वाले मिल गये।

उन्होंने शरद ऋतु के चन्द्रमा की उपमा देते हुए माघ की बडी प्रशसा की। उनका मतलब माँगने से था। उस स्त्री ने अपने पति की प्रशसा सुनकर वह सब रुपये माँगने वालो को मार्ग मे ही दे डाले। जब वह माघ पण्डित के पास पहुँची तब उसने कहा कि हे नाथ! राजा भोज ने मेरा बडा आदर-सत्कार किया और उन्होंने भोजन के लिए तीन लाख रुपये दिये। उन रुपयों को लेकर मैं आ रही थी कि रास्ते मे मुझे बहुत से माँगने वाले मिल गये और वे सब रुपये मैंने उनको दे दिये। माघ ने कहा—हे देवि! तुमने बहुत अच्छा किया। पर, अब यह तो बतलाओ कि ये जो सामने माँगने वाले आ रहे हैं इनको क्या देना चाहिए? इतने ही मे एक मँगता माघ के पास आ गया और उनके पास एक वस्त्र मात्र बचा हुआ देख कर पढने लगा —

> आश्वास्य पर्वतकुल तपनोष्णतप्त-
> मुद्दामदावविधुराणि च काननानि ।
> नानानदीनदशतानि च पूरयित्वा
> रिक्तोऽसि यज्जलद सैव तवोत्तमश्री ॥

अर्थात् हे मेघ! सूर्य की गरमी से तपे हुए पर्वत-कुल को धीरज दे कर और वनो को तेज दावाग्नि से शान्त करके तथा सैकडों नदी और नालो को पूर्ण करके (भर कर) जो तू खाली हुआ है सो तेरी यही उत्तम शोभा है।

यह सुन कर माघ अपनी स्त्री से कहने लगा कि हे देवि! —

अर्था न सन्ति न च मुञ्चति मा दुराशा
त्यागे रतिं वहति दुर्ललितं मनो मे।
याच्ञा च लाघवकरी स्ववधे च पापं
प्राणाः स्वयं व्रजत किं परिवेदनेन॥

मेरे पास धन नहीं है और मुझको दुष्टा तृष्णा नहीं त्यागती। मेरा दुर्ललित मन त्याग करने में प्रसन्न होता है और दूसरे से माँगना मानो प्रतिष्ठा में बट्टा लगाना है। अब मैं क्या करूँ? खुद मरने में आत्महत्यारूपी पाप लगता है और विलाप करने से होता ही क्या है। अच्छा हो कि मेरे प्राण स्वयं छूट जावें। दूसरी बात यह कि—

दारिद्र्यानलसंताप शान्तः सन्तोषवारिणा।
याचकाशाविघातान्तर्दाहः केनोपशाम्यति॥

दरिद्रतारूपी अग्नि से उत्पन्न हुआ ताप सन्तोषरूपी जल से शान्त हो सकता है परन्तु माँगने वालों की आशा भंग करके जो अन्तर्दाह हो रहा है वह किस से शान्त हो सकता है? मुझे संसार में ऐसी कोई चीज दिखलाई नहीं देती जो मेरे अन्तर्दाह को शान्त करे।

उस वक्त माघ पण्डित की उस दुरवस्था को देख कर जितने मँगते आये थे वे सब अपने अपने घर चले गये। मँगतों के चले जाने पर माघ पण्डित कहने लगे —

व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिभिर्व्यर्थतां गतैः।
पश्चादपि च गन्तव्यं क्व सोऽर्थः पुनरीदृशः॥

अगर प्राण जाते हैं तो भले ही चले जावें। अब प्राणों से

क्या जब कि मँगते हताश होकर लौट गये । एक न एक दिन इन प्राणो को जाना तो है ही । अब इनका काम ही क्या है ? फिर ऐसा मौका न मिलेगा ।

इस तरह विलाप करते हुए माघ पण्डित के प्राण निकल गये । अपने पति को मरा हुआ देख कर उसकी स्त्री विलाप करने लगी कि हा ! जिसके घर पर राजा लोग जाकर दास की तरह सेवा करते थे वे अब स्वर्ग को पधार गये । हा ! इस समय मेरे सिवा इनके पास एक भी मनुष्य नहीं है ।

जब राजा भोज को खबर हुई कि माघ पण्डित मर गये हैं तब वे कई विद्वानो को साथ लेकर वहाँ गये और उन्होंने उनकी अच्छी तरह अन्त्येष्टि-क्रिया आदि कराई । इसके बाद उनकी स्त्री भी सती-धर्म ग्रहण करके परलोक को प्राप्त हुई ।

माघ पण्डित के मरने से राजा भोज को बड़ा दुख हुआ । वह उनके शोक मे अत्यन्त दुर्बल हो गया । बात यह कि भोज विद्वानो का बड़ा आदर करता था, सदा उन्ही से बातचीत करके समय बिताता था ।

माघ पण्डित के मरने के समय अच्छे कवि तथा कवि शिरोमणि कालिदास भी वहाँ न थे । कालिदास कुछ नाराज होकर बाहर चले गय थे । जब मन्त्रियों ने देखा कि राजा भोज माघ पण्डित के शोक मे दुर्बल हुए जाते हैं तब उन्होंने सोचा कि यदि इस वक्त कवि कालिदास यहाँ होते तो राजा को इतना दुख न होता । उन्होने आपस में सलाह की कि

वल्लभ देश से कालिदास को बुलाना चाहिए। उन्होंने कालिदास के लिए एक पत्र लिख कर एक मन्त्री को दिया और उसे कालिदास के पास भेज दिया। वह कालिदास के पास पहुँच कर कहने लगा कि मुझको मन्त्रियों ने आपके पास भेजा है और यह पत्र दिया है। पत्र खोल कर कालिदास पढ़ने लगे। उसमें लिखा था —

न भवति स भवति न चिरं भवति चिरं चेत्फले विसंवादी।
कोपः सत्पुरुषाणां तुल्यः स्नेहेन नीचानाम् ॥

सज्जन मनुष्यों को पहले तो गुस्सा आता ही नहीं और यदि आता है तो बहुत देर तक नहीं रहता। यदि कभी बहुत देर तक भी बना रहा तो वह अच्छा फल देने वाला होता है। मतलब यह कि अच्छे मनुष्यों का क्रोध भी नीच मनुष्यों के स्नेह के बराबर होता है।

सहकारे चिरं स्थित्वा सलीलं बालकोकिल।
तं हि त्यक्त्वाऽन्यवृक्षेषु विचरन्न विलज्जसे ॥

हे बालकोकिल। क्रीडा करते हुए बहुत दिन तक आम के वृक्ष पर रहे, अब उसे त्याग कर दूसरे वृक्षों पर विचरता हुआ क्या तू लज्जित नहीं होता। अभिप्राय यह कि राजा भोज जैसे सज्जन राजा के पास रह कर अब इधर उधर क्यों घूमते फिरते हो। वहाँ क्या लाभ है।

कलकण्ठ यथा शोभा सहकारे भवद्गिरः।
खदिरे वा पलाशे वा किं तथा स्याद्विचारय ॥

अर्थात् हे कलकंठ कोकिल ! तेरी वाणी की शोभा जैसी आम के वृक्ष पर थी क्या वैसी शोभा खैर और ढाक के वृक्ष पर हो सकती है ? जरा विचार तो कर ।

उस पत्र में ये वचन पढ़ कर कालिदास के मन ने पलटा खाया । वे जिस राजा के पास रहते थे उससे पूछ कर तत्काल धारा नगरी को चल दिये । वहाँ पहुँच कर राजा भोज से मिले । भोज ने उनकी बड़ी प्रतिष्ठा की । उनके आने से भोज का शोक जाता रहा । इसके बाद और भी बाहर गये हुए कवि वहाँ आगये । राजा भोज की फिर पहले के समान सभा होने लगी और आनन्दपूर्वक समय बीतने लगा ।



चौबीसवां परिच्छेद

एक ब्रह्मचारी

एक दिन राजा भोज अपने महल में बैठे हुए थे। उनके पास द्वारपाल आया और कहने लगा कि हे देव! पर्वत देश से आया हुआ एक ब्रह्मचारी विद्वान् द्वार पर खड़ा है। वह आप
ः मिलना चाहता है। राजा ने कहा, अच्छा भेजो। ब्रह्मचारी
आकर 'चिरजीव' कह कर राजा को आशीर्वाद दिया।
शलप्रश्न पूछने के बाद राजा ने कहा कि हे ब्रह्मचारिन्!
ापकी उम्र बहुत कम है और आज-कल कलियुग है। इस
ा में यह आपका वेश अच्छा नहीं मालूम होता। बतलाइए
कि आपने कौन सा व्रत धारण किया है? मालूम होता
, आप व्रत अधिक रखते हैं और निराहार रहते हैं। इसीसे
ाप अत्यन्त दुर्बल हो रहे हैं। यदि आप गृहस्थ धर्म में रहना
तन्द करें तो मैं आपके विवाह का प्रबन्ध कर दूँ जिससे
ापको कष्ट भोगना न पड़े। कहिए, आपको स्वीकृत है?

ब्रह्मचारी ने कहा—हे देव! आप राजा हैं। आप जो कुछ कहें कह सकते हैं, आप जो कुछ करना चाहें कर सकते हैं, आपको कोई बात मुश्किल नहीं। पर, हे राजन्! मेरा जो सिद्धान्त या मन्तव्य है उसे कृपा करके सुन लीजिए'—

सारङ्गा सुहृदो गृह गिरिगुहा शान्ति प्रिया गेहिनी
वृत्तिर्वन्यलताफलैर्निवसनं श्रेष्ठ तरूणां त्वच।
तद्ध्यानामृतपूरमग्नमनसा येषामियं निर्वृति-
स्तेषामिन्दुकलावतंसयमिनां मोक्षेऽपि नो न स्पृहा॥

अर्थात् पशु-पक्षी मेरे मित्र हैं, पर्वत की गुफा ही मेरा घर है, अपने मन की प्यारी शान्ति ही मेरी स्त्री है, अग्नि, फल और लता आदि से मेरी जीविका है, और वृक्षों की छाल ही मेरे लिए उत्तम कपड़े हैं। प्रभु के ध्यान-रूप अमृतपूर से जिनका मन भरा हुआ है अर्थात् प्रसन्न है, उनके लिए यही गृहस्थ आनन्ददायक है। हम जैसे महादेव के उपासकों की तो मोक्ष में भी इच्छा नहीं है।

ब्रह्मचारी की बातें सुन कर राजा भोज बड़े खुश हुए और उसके चरण छूने के बाद कहने लगे कि हे ब्रह्मचारिन्! अब कृपा करके यह बतलाइए कि मेरा कर्तव्य क्या है अर्थात् मुझे क्या करना चाहिए। उसने कहा कि, हे राजन्! मैं ... जाना चाहता हूँ इसलिए तुम मेरे साथ अपने अच्छे अच्छे पण्डितों को भेज दो। मैं उनके साथ बात चीत करता हुआ वहाँ जाऊँगा। अगर आप मेरे इस काम को

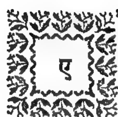
कर देंगे तो मुझे बड़ी खुशी होगी। राजा ने स्वीकार कर लिया और ब्रह्मचारी के साथ कई अच्छे अच्छे विद्वानों को जाने की आज्ञा दे दी। कई अच्छे विद्वान् ब्रह्मचारी के साथ जाने के लिए तैयार हो गये पर कालिदास ने जाना स्वीकृत न किया। तब कालिदास से राजा ने पूछा कि सुकवे! तुम काशी क्यों नहीं जाते। कालिदास ने कहा— हे राजन्! आप तो सब कुछ जानते-बूझते हैं। आपसे विशेष कहने की आवश्यकता नहीं। उन्होंने कहा —

हे राजन्! जो मनुष्य देवताओं के देवता महादेव से दूर रहते हैं—जो कभी ईश्वर का भजन नहीं करते किन्तु उससे दूर रहते हैं—वे ही मनुष्य तीर्थों में जाते हैं। जो सदा उसका ध्यान रखता है, जो सदा उसका नाम लेता है वह तो खुद ही तीर्थ-रूप है। मतलब यह कि ईश्वर का भजन करने वालों को नाम-धारी तीर्थों से क्या मतलब। कालिदास की बात राजा समझ गये। वे उनसे ख़ुश हो गये। फिर उन्होंने उनका और भी अधिक आदर किया।



पच्चीसवां परिच्छेद

मृत्यु की कविता


क दिन राजा भोज और कवि कालिदास आपस में वातचीत कर रहे थे। राजा ने वातचीत करते करते कालिदास से कहा कि हे कविराज! आप एक ऐसी कविता वनाइए जो मेरी मृत्यु की हो। मैं आपका वडा कृतज्ञ हूँगा।

कालिदास ने उत्तर दिया—महाराज! आप मृत्यु की कविता क्यों बनवाते हैं। ऐसी कविता मुझसे अच्छी न वन सकेगी, क्षमा कीजिए। भोज ने वार वार हठ करके कहा कि नहीं महाराज! आज विना कविता वनवाये मैं तुमको न छोड़ूँगा।

जव राजा ने वहुत हठ किया तव कालिदास वहाँ से उठे और नाराज होकर अपने घर को चले गये। कुछ देर वाद वे वहाँ से भी नगर के वाहर चले गये। जव राजा ने यह सुना कि कवि कालिदास नाराज होकर शहर से वाहर चला गया है तव उसको वडा दुख हुआ। राजा भोज ने कुछ दिन

तो यों ही निताये पर जब बहुत दिन हो गये और कवि कालिदास उनके पास न आये तब अधिक वियोग राजा से न सहा गया। अन्त में राजा अपने राज्य का कारागार अपने राज्य के प्रधान मनुष्यों को सौंप कर, आप योगी का वेश बना कर, वहीं चले गये जहाँ कवि कालिदास गये हुए थे।

इधर उधर ढूँढने पर कुछ दिन में कालिदास मिल गये। कालिदास ने राजा को पहचाना नहीं। आपस में बातचीत करने लगे। बातचीत करते करते कालिदास ने पूछा कि हे योगिराज, आप कहाँ रहते हैं?

योगी ने उत्तर दिया—हे कविराज! यह संसार ही मेरा देश है। जहाँ रह गया, वहीं मेरा घर हो गया।

कालिदास ने फिर पूछा—आप इस समय कहाँ से आते हैं? योगी ने कहा कि मैं इस वक्त धारा नगरी से आ रहा हूँ। वहाँ एक झगड़ा हो गया है। कालिदास ने घबरा कर पूछा—क्या हुआ? योगी ने कहा कि राजा भोज परलोक-वासी हो गये। भोज की मृत्यु की बात सुनते ही कालिदास मूर्च्छित हो गये और पृथिवी पर गिर पड़े। जब होश आया तब विलाप करने लगे कि हा! अब राजा भोज के बिना पण्डितों का आदरसत्कार—मान प्रतिष्ठा—कौन करेगा! मैं राजा भोज के बिना अब जी कर क्या करूँगा। हा! धारा नगरी बिना मालिक के हो गई। कुछ देर चुप रह कर एक श्लोक बना कर कालिदास बोले—

अद्य धारा निराधारा निरालम्बा सरस्वती ।
पण्डिता खण्डिता सर्वे भोजराजे दिवं गते ॥

राजा भोज के परलोकवासी होने से धारा नगरी निराधार —बेसहारे—हो गई। अब सरस्वती का कोई सहारा नहीं रहा। अब सब पण्डित—विद्वान्—निराश्रय हो गये।

जब कालिदास ने अपना बनाया श्लोक पढ़ कर सुनाया तब अपने ऊपर कालिदास की अत्यन्त प्रीति जान कर राजा मूर्च्छित हो गये।

राजा की मूर्च्छित अवस्था को देख कर कालिदास ने सोचा कि यह कौन है जो मेरे श्लोक को सुनते ही मूर्च्छित हो गया। जब खूब ध्यान से देखा तब कालिदास ने पहचाना कि यह तो राजा भोज ही है। फिर राजा को सावधान करके कालिदास ने कहा, महाराज! आपने मुझे पहचान लिया है। मैंने जो श्लोक बना कर कहा था वह अशुद्ध हो गया था। अब सही बना कर कहता हूँ, सुनिए। शब्द बदल कर सुनाया—

अद्य धारा सदाधारा सदालम्बा सरस्वती ।
पण्डिता मण्डिता सर्वे भोजराजे भुवं गते ॥

राजा भोज के होने से धारा नगरी उत्तम आधार वाली हुई है। सरस्वती आश्रयवाली हुई है और सब विद्वान् उनसे शोभा पा रहे हैं।

अपने ऊपर कालिदास की अत्यन्त प्रीति जान कर भोज

अत्यन्त खुश हुआ और उसको साथ लेकर धारा नगरी में पहुँचा।

राजा भोज बडा विद्वान् था। वह अपनी विद्या, बुद्धि और गुणग्राहकता के लिए सारे देश मे विख्यात हो गया। उसने अगणित विद्वानो की मनोहारिणी कविता पर मोहित होकर असख्य धन पारितोषिक में दे डाला। उसके समय मे सस्कृत विद्या की जैसी उन्नति हुई, विद्वानों को जैसा आश्रय मिला, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। राजा भोज लक्ष्मी और सरस्वती दोनो का ही प्रीतिभाजन था। ये दोनो ही देवियाँ सदा उसकी सहचारिणी बनी रहती थीं। राजा भोज ने बडी उत्तमता से राज-काज किया और विद्वानों को खूब धन-दान किया। इस समय राजा भोज ससार में नहीं है, पर उसकी कीर्ति-कौमुदी अभी तक सर्वत्र छा रही है। जब तक इस देश मे सस्कृत-विद्या का कुछ भी प्रचार रहेगा तब तक राजा भोज की कीर्ति भी बराबर इसी तरह देदीप्यमान रहेगी।



छब्बीसवां परिच्छेद

कालिदास का संक्षिप्त चरित



स किताब मे कालिदास की बुद्धिमत्ता का वर्णन अधिकता मे है। इसलिए हम इनका सक्षिप्त चरित लिख देना उचित समझते हैं जिससे पाठकों को मालूम हो जावे कि कालिदास किस तरह पढे लिखे थे। उनकी पूर्व की दशा कैसी थी? और कालिदास कौन थे? इत्यादि बातो को जानने के लिए उनका कुछ हाल हम यहाँ लिखते हैं। उनका हाल इस तरह सुना जाता है—

बगाल में एक राजा राज्य किया करता था। उसका नाम था सत्यवान्। उस राजा के चम्पककलिका नाम की एक लडकी थी। राजा का जो प्रधान मन्त्री था उसके भी एक पुत्र था। उसका नाम चूडामणि था। राजकन्या तथा चूडामणि मे एक साथ रहते रहते मित्रता हो गई। इन दोनों की उम्र बहुत कम थी, इसलिए छोटे लडकों की तरह ये दोनों एक ही

साथ खेलकूद किया करते थे। इन दोनों में अभी तक इतनी विचारशक्ति पैदा न हुई थी कि कौन सी बात कहनी योग्य है, कौन सी नहीं। एक दिन रोजमर्रा की तरह दोनों खेल रहे थे। खेलते खेलते राजकन्या से चूडामणि कहने लगा कि अरी चम्पककलिका! तू मेरी स्त्री बनेगी। मैं तेरे साथ विवाह करूँगा। अगर तू मेरी स्त्री बनना अच्छा समझे तो जब तेरे पिता तेरा विवाह करने का विचार करें तब उनसे कह देना कि मैं अपना विवाह चूडामणि से करना चाहती हूँ।

मन्त्री के लडके की बातें सुन कर राजकन्या को कुछ क्रोध हुआ। वह कहने लगी कि अरे चूडामणि! तू हमारे पिता के मन्त्री का लडका है। तू तो हमारा सेवक है। तेरा विवाह मेरे साथ कैसे हो सकता है? क्या मेरे साथ विवाह करने को कोई अच्छे घराने का राजकुमार न मिलेगा? अगर अच्छे घर का कोई राजकुमार मुझको विवाह के लिए न मिला तो मैं दूसरे किसी सामान्य मनुष्य के साथ विवाह न करूँगी, यह निश्चय समझना।

राजकन्या की ये बातें सुन कर चूडामणि को क्रोध हो आया। वह कहने लगा कि हे राजपुत्री! सुनो। जब तुम्हारे पिता तुम्हारा विवाह करने का विचार करेंगे तब मेरे पिता से अवश्य कहेंगे। उस समय इस काम को मैं अपने हाथ में ले लूँगा और तेरे लिए ऐसा वर ढूँढ कर लाऊँगा मूर्ख हो। उस समय तू क्या करेगी। राजकन्या

अरे चूडामणि ! मुझे पति मूर्ख मिलेगा या बुद्धिमान्, यह बात तुम्हारे पिता या तुम्हारे भरोसे पर नहीं है । यह बात तो केवल भाग्य के भरोसे पर है । मेरे भाग्य में जैसा वर मिलना होगा वैसा ही मिलेगा, उसमें तू कुछ भी नहीं कर सकता ।

ये बातें करके दोनो अपने अपने घर को चले गये । मन्त्री के लडके की उम्र कुछ अधिक थी । इसलिए उस को तो यह बात बडी उम्र तक याद बनी रही । किन्तु राजकन्या की उम्र उस समय कुछ कम थी इसलिए थोडे ही दिन मे उसे उस बात का कुछ भी ख्याल न रहा । कुछ दिन के बाद दोनो बडे हो गये ।

राजा ने जब देखा कि चम्पककलिका अब विवाह के योग्य हो गई है तब उसने उसके विवाह का विचार किया । एक दिन राजा ने अपने प्रधान मन्त्री से कहा कि अब मेरी लडकी विवाह के योग्य हो गई है इसलिए कोई योग्य वर ढूँढना चाहिए । यह काम मैं तुम्हारे ही अधीन करना चाहता हूँ इसलिए तुम्हीं कोई अच्छा राजकुमार ढूँढो ।

राजा की आज्ञा स्वीकार करके प्रधान मन्त्री अपने घर आया । उसने अपने घर में इस बात का जिक्र किया कि राजकन्या के लिए कोई वर ढूँढना है । यह बात उसके पुत्र को भी मालूम हुई । वह पहली बात उसको अच्छी तरह याद थी । उसने अपने पिता से कहा कि आप बूढे हैं,

आप इधर उधर घूमने के योग्य नहीं हैं। योग्य वर न मिलने से शायद दूर तक जाना पड़े तो आपको अधिक तकलीफ होगी। दूसरी बात यह कि यदि आप वर को ढूँढते ढूँढते कहीं दूर निकल गये और राज कार्य म कोई विघ्न-बाधा हुई तो उसको उस समय आप के बिना कौन सँभालेगा। राज-कार्य प्रधान है। इसको छोड़ कर आप का जाना उचित नहीं मालूम होता। इस काम को मैं अच्छी तरह कर सकता हूँ। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं वर ढूँढ लाऊँ।

राजा को तथा मन्त्री को चूडामणि की पहली बात की कुछ भी खबर न थी। उन दोनों मे से एक भी इस बात को न जानता था कि राजपुत्री और मन्त्रिपुत्र के बीच बचपन मे अनबन हो गई है जिसके कारण मन्त्री का लड़का ऐसी कार्रवाई करना चाहता है। मन्त्री ने अपने लड़के की बातें सुन कर कहा कि यदि तुम योग्य वर ढूँढ लाओ तो क्या कहना है। मैं राजा से पूँछ लूँ। बिना राजा की आज्ञा के मैं तुमको नहीं भेज सकता। पुत्र से इस तरह कह कर प्रधान मन्त्री राजा के पास आज्ञा लेने के लिए चला गया। राजा ने प्रधान मन्त्री से कहा कि अगर तुम्हारा लड़का इस काम को अच्छी तरह कर सकता है तो उसी को भेज दो। आपका लड़का तथा मेरी लड़की दोनों बचपन मे भाई बहन की तरह एक साथ खेला करते थे। उन दोनो मे अच्छा मेल था। आप का लड़का यह अच्छी तरह जानता ही है कि

राजकन्या के लिए वर कैसा होना चाहिए। वह अच्छा ही वर ढूँढ कर लावेगा इसलिए उसी को जाने दो।

राजा की आज्ञा पाकर मन्त्री ने अपने लडके को भेजने के लिए मार्ग का सामान तैयार कराया। सब सामान देकर कुछ नौकर साथ जाने के लिए भेजे। मन्त्री का लडका वर ढूँढने के लिए चल दिया। राजकन्या को भी यह मालूम हो गया कि चूडामणि वर ढूँढने को जा रहा है। उसे वचपन की वात विलकुल याद न थी।

चूडामणि अपने घर से निकल कर अनेक देश-देशातर मे घूमता फिरा, पर जैसा वर उसको चाहिए था वैसा कहीं भी न मिला। एक दिन वह घुमता घूमता जा रहा था कि रास्ते मे एक वन मिला। उस वन में देखा कि एक लडका एक वृक्ष पर चढा हुआ है और जिस डाली पर बैठा है उसी को काट रहा है। चूडामणि ने देख कर कहा कि अरे लडके! तू यह क्या कर रहा है, जिस डाली पर तू बैठा है उसी को काट रहा है। इस डाली के काटते ही तू भी जमीन पर आ गिरेगा।

उस लडके ने कहा कि आप ठीक कहते हैं, पर मैं क्या करूँ। मैं इस वृक्ष पर चढते तो चढ गया पर अब उतरना मुझे नहीं आता। इसलिए इस डाली को काट रहा हूँ कि कट कर वह डाली नीचे गिर पडे तो मैं भी इसके साथ जमीन तक आ जाऊँ।

उस लडके की वातें सुन कर चूडामणि ने अपने मन में

निश्चय किया कि यह बिलकुल मूर्ख है। जैसा वर मैं ढूँढने को निकला हूँ वैसा ही है। यह देखने में खूबसूरत और बोलने में भी चतुर मालूम होता है, पर है बड़ा मूर्ख। मैंने हजारों मूर्ख देखे हैं पर ऐसा मूर्ख एक भी न मिला था। राजकन्या के लिए यही अच्छा वर है।

अब चूडामणि ने अपने एक नौकर से कहा कि इस मनुष्य को वृक्ष से नीचे उतार लो। उसने उसको नीचे उतार लिया। उस मूर्ख लड़के से नौकर ने पूछा कि तू कौन है? किस वर्ण का लड़का है? क्या किया करता है? तेरी जीविका किस तरह होती है? उस लड़के ने धीरे से उत्तर दिया कि मैं एक ब्राह्मण का पुत्र हूँ। मैं लिखा पढ़ा कुछ भी नहीं हूँ। जब मैं छोटा था तभी मेरे पिता-माता मुझको छोड़ कर कहीं चले गये थे। अब मैं गाँव की गाय-भैंसें चरा कर अपना गुजारा किया करता हूँ।

चूडामणि ने कहा कि यदि तू हमारे राजा की कन्या से अपना विवाह करना चाहे तो हमारे साथ चल। हम तेरी शादी करा देंगे। वह बेचारा मूर्ख तो था ही। उसने इस बात का बिलकुल विचार न किया कि कहाँ तो राजकन्या और कहाँ मैं। मेरी क्या योग्यता है कि मेरा विवाह राजकन्या से हो सके। उसने कह दिया कि बहुत अच्छा, मैं राजकन्या से अपना विवाह करने के लिए राजी हूँ।

अब चूडामणि ने उस अज्ञान बालक को नदी में स्नान

कराया। अपने पास से अच्छे अच्छे कपडे देकर उसको पहनाये और कुछ आभूषण भी पहना दिये। मतलब यह कि उसको ऐसे सामान से सजा दिया जिससे मालूम हो कि यह किसी उच्च घराने का लडका है। जब उसका ठाटवाट ठीक हो गया तब चूडामणि अपनी सवारी मे बैठा कर चल दिया। वे सब वडी धूमधाम से उसे लेकर अपने नगर मे पहुँचे। चूडामणि ने उस वर को एक मन्दिर में उतार दिया और उसके पास ऐसे विश्वासपात्र मनुष्य पहरे पर तैनात कर दिय जिससे उसका भाँडा न फूट सके। उस मूर्ख लडके को चूडामणि ने अच्छी तरह समझा दिया था कि देखो जब तुमको कोई देखने आये तब बहुत न बोलना और देखनेवालों के सामने खूब शान से रहना। उस मन्दिर में उसका अच्छा प्रबध करके चूडामणि वहाँ से चल दिया।

अब नगर मे इस बात की खबर फैल गई कि राजकन्या के लिए मगध देश का एक वर आ गया है। चूडामणि ने भी राजा से जा कर कहा कि महाराज! मैं वर की खोज मे देशदेशातर में गया। बडी खोज के बाद मगध देश में एक वर आपकी कन्या के योग्य मिला है। अब मैं उसको अपने साथ ले आया हूँ।

नगरवासी बहुत से मनुष्य उसको देखने के लिए आए। उसके रूप-लावण्य को देख कर सबने उसे पसन्द किया।

अब राज्य की ओर से विवाह का सामान होने लगा।

गाय-भैंसो को देख कर वह बड़ा खुश हुआ और कहने लगा कि देखो इन जानवरों के लिए यह कैसा अच्छा जङ्गल है, इन के चरने के लिए कैसा आराम है। उस मूर्ख की बातें सुन कर राजकुमारी को विश्वास हो गया कि यह राजकुमार नहा किंतु ग्वालिया मालूम होता है।

राजकुमारी को यह निश्चय हो गया कि यह कोई ग्वालिया है, बड़ा मूर्ख है, इसके साथ रह कर जन्म भर दुख भोगना पड़ेगा। इसको किसी उपाय से घर से निकाल दिया जाय तो कदाचित् यह कुछ पढ़-लिख जाय। यह सोच विचार कर एक दिन राजकुमारी ने साफ साफ कह दिया कि तुम मेरे योग्य नहीं, तुम्हारे साथ मेरी जिन्दगी नहीं कट सकती। इसलिए तुमको मैं मरवा दूँगी। वह डरते हुए कहने लगा कि मैंने आपका कोई नुकसान नहीं किया। आप मुझको मारने का क्यों विचार करती हैं। राजकुमारी ने कहा कि तु अत्यन्त मूर्ख है, तेरे साथ रहने की अपेक्षा यदि मैं विधवा होकर रहूँगी तो अच्छा है। मूर्ख मित्र के साथ रहना अच्छा नहा, इससे तो यही अच्छा है कि मनुष्य बिना मित्र के रहे। इसीलिए मैं तुझे मारना चाहती हूँ।

मूर्ख ने पूछा कि मैं मूर्ख क्यों हुआ सो तो बताइए?

राजकन्या ने उत्तर दिया कि तुमने पूर्व जन्म मे अच्छे काम नहीं किये थे इसीसे तुम मूर्ख रह गये।

उस मूर्ख ने कहा कि अब मैं क्या करूँ? मुझको

कि 'तेरे लिए ऐसा वर ढूँढा जावेगा जो निपट मूर्ख एव गरीब होगा'। इस तरह वह बहुत देर तक सोचती रही और मन में बडी दुखी हुई कि यह क्या हुआ। जब वह किसी तरह उठा ही नहीं, देर भी बहुत हो चुकी थी, तब उसने उसका एक हाथ पकड कर उसको बैठा दिया। वह ज्यों ही जागा त्यों ही उसने देखा कि सामने एक ऐसी राजकुमारी खडी है जो रूप-लावण्य मे अद्वितीय है। उसके मुँह पर ऐसी शोभा, ऐसी कान्ति थी कि वैसी रूपवती कोई स्त्री उसने कभी देखी ही न थी। वह देखते ही डर गया और खाट पर से उतर कर नीचे खडा हो गया। वह हाथ जोड कर कहने लगा कि हे राजकुमारी! मुझे यह मालूम न था कि यह खाट आपकी है। आपकी खाट मैं जानता तो कभी न सोता। क्षमा कीजिए। आपके ही नौकरों ने मुझको इस पर सुला दिया था। इससे मैं इस पर सो गया। अपराध क्षमा हो।

अब राजकुमारी ने उसकी परीक्षा लेने के लिए उसको नाना प्रकार की चीजे दिखलाई पर उसने किसी चीज की तरफ नजर न की। किसी भी चीज के लिए यह न कहा कि यह अच्छी बनी है या बुरी। वह बेचारा क्या जानता था कि राजकुमारी की दिखलाई हुई चीजें बेशक़ीमती हैं। उसने कभी ऐसी चीजें देखी ही न थीं। वह तो जन्म भर गाय-भैंसें ही चराता रहा था। एक दिन अकस्मात् उसको राजकुमारी के साथ वन मे जाने का मौका हुआ। वहाँ चरती हुई

गाय-भैंसो को देख कर वह बडा खुश हुआ और कहने लगा कि देखो इन जानवरों के लिए यह कैसा अच्छा जङ्गल है, इन के चरने के लिए कैसा आराम है। उस मूर्ख की बातें सुन कर राजकुमारी को विश्वास हो गया कि यह राजकुमार नहीं किंतु ग्वालिया मालूम होता है।

राजकुमारी को यह निश्चय हो गया कि यह कोई ग्वालिया है, बडा मूर्ख है, इसके साथ रह कर जन्म भर दुख भोगना पडेगा। इसको किसी उपाय से घर से निकाल दिया जाय तो कदाचित् यह कुछ पढ-लिख जाय। यह सोच विचार कर एक दिन राजकुमारी ने साफ साफ कह दिया कि तुम मेरे योग्य नहीं, तुम्हारे साथ मेरी जिन्दगी नहीं कट सकती। इसलिए तुमको मैं मरवा दूँगी। वह डरते हुए कहने लगा कि मैंने आपका कोई नुकसान नहीं किया। आप मुझको मारने का क्यो विचार करती हैं। राजकुमारी ने कहा कि तू अत्यन्त मूर्ख है, तेरे साथ रहने की अपेक्षा यदि मैं विधवा होकर रहूँगी तो अच्छा है। मूर्ख मित्र के साथ रहना अच्छा नहीं, इससे तो यही अच्छा है कि मनुष्य विना मित्र के रहे। इसीलिए मैं तुझे मारना चाहती हूँ।

मूर्ख ने पूछा कि मैं मूर्ख क्यों हुआ सो तो बताइए?

राजकन्या ने उत्तर दिया कि तुमने पूर्व जन्म में अच्छे काम नहीं किये थे इसीसे तुम मूर्ख रह गये।

उस मूर्ख ने कहा कि अब मैं क्या करूँ? मुझको

कि 'तेरे लिए ऐसा वर ढूँढा जावेगा जो निपट मूर्ख एव गरीब होगा' । इस तरह वह वहुत देर तक सोचती रही और मन में बडी दुखी हुई कि यह क्या हुआ । जब वह किसी तरह उठा ही नहीं, देर भी वहुत हो चुकी थी, तब उसने उसका एक हाथ पकड कर उसको वैठा दिया । वह ज्यो ही जागा त्यों ही उसने देखा कि सामने एक ऐसी राजकुमारी खडो है जो रूप-लावण्य में अद्वितीय है । उसके मुँह पर ऐसी शोभा, ऐसी कान्ति थी कि वैसी रूपवती कोई स्त्री उसने कभी देखी ही न थी । वह देखते ही डर गया और खाट पर से उतर कर नीचे खडा हो गया । वह हाथ जोड कर कहने लगा कि हे राज-कुमारी! मुझे यह मालूम न था कि यह खाट आपकी है । आपकी खाट मैं जानता तो कभी न सोता । क्षमा कीजिए । आपके ही नौकरों ने मुझको इस पर सुला दिया था । इससे मैं इस पर सो गया । अपराध क्षमा हो ।

अब राजकुमारी ने उसकी परीक्षा लेने के लिए उसको नाना प्रकार की चीजे दिखलाई पर उसने किसी चीज की तरफ नजर न की । किसी भी चीज के लिए यह न कहा कि यह अच्छी वनी है या बुरी । वह वेचारा क्या जानता था कि राजकुमारी की दिखलाई हुई चीजे वेशकीमती हैं । उसने कभी ऐसी चीजे देखी ही न थीं । वह तो जन्म भर गाय-भैंसे ही चराता रहा था । एक दिन अकस्मात् उसको राजकुमारी के साथ वन मे जाने का मौका हुआ । वहाँ चरती हुई

गाय-भैंसो को देख कर वह बडा खुश हुआ और कहने लगा कि देखो इन जानवरों के लिए यह कैसा अच्छा जङ्गल है, इन के चरने के लिए कैसा आराम है। उस मूर्ख की बातें सुन कर राजकुमारी को विश्वास हो गया कि यह राजकुमार नहा किंतु ग्वालिया मालूम होता है।

राजकुमारी को यह निश्चय हो गया कि यह कोई ग्वालिया है, बडा मूर्ख है, इसके साथ रह कर जन्म भर दुख भोगना पडेगा। इसको किसी उपाय से घर से निकाल दिया जाय तो कदाचित् यह कुछ पढ-लिख जाय। यह सोच विचार कर एक दिन राजकुमारी ने साफ साफ कह दिया कि तुम मेरे योग्य नहीं, तुम्हारे साथ मेरी जिन्दगी नहीं कट सकती। इसलिए तुमको मैं मरवा दूँगी। वह डरते हुए कहने लगा कि मैंने आपका कोई नुकसान नहीं किया। आप मुझको मारने का क्यों विचार करती हैं। राजकुमारी ने कहा कि तू अत्यन्त मूर्ख है, तेरे साथ रहने की अपेक्षा यदि मैं विधवा होकर रहूँगी तो अच्छा है। मूर्ख मित्र के साथ रहना अच्छा नहा, इससे तो यही अच्छा है कि मनुष्य विना मित्र के रहे। इसीलिए मैं तुझे मारना चाहती हूँ।

मूर्ख ने पूछा कि मैं मूर्ख क्यों हुआ सो तो बताइए?

राजकन्या ने उत्तर दिया कि तुमने पूर्व जन्म मे अच्छे काम नहीं किये थे इसीसे तुम मूर्ख रह गये।

उस मूर्ख ने कहा कि अब मैं क्या करूँ?

कौन सा उपाय करना चाहिए जिससे मैं पढ़-लिख सकूँ।

राजकन्या ने कहा—आज कल इस शहर के बाहर एक कालीचन्द्र नामक ऋषि आये हुए हैं उनके पास जाकर पूछो। वे तुमको उपाय बतला देंगे।

राजकन्या जब ऊपर का हाल कह चुकी तब फिर उसके मन में जलन पैदा हुई कि इस मूर्ख का मार देना ही अच्छा है। वह तलवार निकाल कर उसको मारने के लिए तैयार हुई। उस समय उस मूर्ख ने हाथ जोड कर कहा, मुझे मारो मत। आज से मैं इस नगर में कभी न आऊँगा। आज ही मैं इस नगर को छोड कर बाहर चला जाऊँगा।

राजकन्या ने मन में विचार किया कि यह नगर छोड ही देगा और बडा पाप तो मनुष्य-हिंसा ही में है। फिर यह तो मेरा पति हो चुका है। इसके मारने में महापाप होगा। यह विचार कर उसने उसको छोड दिया। मारा नहीं।

मूर्ख ब्राह्मण मृत्यु से छुटकारा पाते ही वहाँ से चल दिया। वह ढूँढता ढूँढता उसी कालीचन्द्र ऋषि के पास पहुँचा। उसने अपने मन में सोचा कि मुझे धिक्कार है कि मैं ब्राह्मण होकर मूर्ख बना रहा। मूर्ख होने से ही राजकन्या ने मुझे अपने घर से निकाल दिया। यदि मैं कुछ भी पढा-लिखा होता तो वह मुझको क्यों निकालती। यह सोच कर वह मुनि के पास जाकर खडा हुआ और हाथ जोड कर

कौन सा उपाय करना चाहिए जिससे मैं पढ़-लिख सकूँ।

राजकन्या ने कहा—आज कल इस शहर के बाहर एक कालीचन्द्र नामक ऋषि आये हुए हैं उनके पास जाकर पूछो। वे तुमको उपाय बतला देंगे।

राजकन्या जब ऊपर का हाल कह चुकी तब फिर उसके मन में जलन पैदा हुई कि इस मूर्ख का मार देना ही अच्छा है। वह तलवार निकाल कर उसको मारने के लिए तैयार हुई। उस समय उस मूर्ख ने हाथ जोड़ कर कहा, मुझे मारो मत। आज से मैं इस नगर में कभी न आऊँगा। आज ही मैं इस नगर को छोड़ कर बाहर चला जाऊँगा।

राजकन्या ने मन में विचार किया कि यह नगर छोड़ ही देगा और बड़ा पाप तो मनुष्य-हिंसा ही में है। फिर यह तो मेरा पति हो चुका है। इसके मारने में महापाप होगा। यह विचार कर उसने उसको छोड़ दिया। मारा नहीं।

मूर्ख ब्राह्मण मृत्यु से छुटकारा पाते ही वहाँ से चल दिया। वह ढूँढ़ता ढूँढ़ता उसी कालीचन्द्र ऋषि के पास पहुँचा। उसने अपने मन में सोचा कि मुझे धिक्कार है कि मैं ब्राह्मण होकर मूर्ख बना रहा। मूर्ख होने से ही राजकन्या ने मुझे अपने घर से निकाल दिया। यदि मैं कुछ भी पढ़ा-लिखा होता तो वह मुझको क्यों निकालती। यह सोच कर वह मुनि के पास जाकर खड़ा हुआ और हाथ जोड़ कर

कहने लगा कि हे महाराज ! मैं बड़ा मूर्ख हूँ, मैं कुछ भी पढ़ा-लिखा नहीं हूँ । मेरा विवाह एक राजकन्या से हुआ था । वह बहुत पढ़ी-लिखी है । उसने मुझको मूर्ख समझ कर मारना चाहा था । वह मुझको अपने साथ किसी तरह भी रखने को राजी न हुई । जैसे तैसे मैं वहाँ से भाग आया हूँ । अब आप के शरण मे हूँ । आप किसी प्रकार मुझे पढ़ने का उपाय बतलाइए कि मैं क्या करूँ । मूर्ख रहना अच्छा नहीं ।

उन्होंने देख कर उस मूर्ख से कहा कि अरे ! तू घबराता क्यों है । मैं तुझको बहुत जल्दी पढ़ा-लिखा कर विद्वान् बना दूँगा । तू धीरज धर, तू बड़ा विद्वान् बन जावेगा । तब वह ऋषिराज के ही पास रहने लगा और विद्या के गूढ मर्म को सीखने लगा ।

राजघराने से जब वह मूर्ख ब्राह्मण चला गया तब राजकन्या के चित्त मे कुछ सन्तोष हुआ ।

थोड़े दिन के बाद वह ब्राह्मण पढ़ लिख कर ऐसा विद्वान् हुआ जिसकी कीर्ति आज देश-देशान्तर म छाई हुई है । जब वह पूर्ण विद्वान् हो गया तब अपने घर पर आया और दर्वाजे पर आकर कहने लगा कि "कपाटावुद्घाटय"— किवाड़ खोलो । राजकुमारी उस समय किसी कार्य मे

कौन सा उपाय करना चाहिए जिससे मैं पढ़-लिख सकूँ।

राजकन्या ने कहा—आज कल इस शहर के बाहर एक कालीचन्द्र नामक ऋषि आये हुए हैं उनके पास जाकर पूछो। वे तुमको उपाय बतला देंगे।

राजकन्या जब ऊपर का हाल कह चुकी तब फिर उसके मन में जलन पैदा हुई कि इस मूर्ख का मार देना ही अच्छा है। वह तलवार निकाल कर उसको मारने के लिए तैयार हुई। उस समय उस मूर्ख ने हाथ जोड कर कहा, मुझे मारो मत। आज से मैं इस नगर मे कभी न आऊँगा। आज ही मैं इस नगर को छोड कर बाहर चला जाऊँगा।

राजकन्या ने मन में विचार किया कि यह नगर छोड ही देगा और बडा पाप तो मनुष्य-हिंसा ही मे है। फिर यह तो मेरा पति हो चुका है। इसके मारने मे महापाप होगा। यह विचार कर उसने उसको छोड दिया। मारा नहीं।

मूर्ख ब्राह्मण मृत्यु से छुटकारा पाते ही वहाँ से चल दिया। वह ढूँढता ढूँढता उसी कालीचन्द्र ऋषि के पास पहुँचा। उसने अपने मन में सोचा कि मुझे धिक्कार है कि मैं ब्राह्मण होकर मूर्ख बना रहा। मूर्ख होने से ही राजकन्या ने मुझे अपने घर से निकाल दिया। यदि मैं कुछ भी पढा-लिखा होता तो वह मुझको क्यो निकालती। यह सोच कर वह मुनि के पास जाकर खडा हुआ और हाथ जोड कर

कहने लगा कि हे महाराज! मैं बड़ा मूर्ख हूँ, मैं कुछ भी पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। मेरा विवाह एक राजकन्या से हुआ था। वह बहुत पढ़ी-लिखी है। उसने मुझको मूर्ख समझ कर मारना चाहा था। वह मुझको अपने साथ किसी तरह भी रखने को राजी न हुई। जैसे तैसे मैं वहाँ से भाग आया हूँ। अब आप के शरण में हूँ। आप किसी प्रकार मुझे पढ़ने का उपाय बतलाइए कि मैं क्या करूँ। मूर्ख रहना अच्छा नहीं।

उन्होंने देख कर उस मूर्ख से कहा कि अरे! तू घबराता क्यों है। मैं तुझको बहुत जल्दी पढ़ा-लिखा कर विद्वान् बना दूँगा। तू धीरज धर, तू बड़ा विद्वान् बन जावेगा। तब वह ऋषिराज के ही पास रहने लगा और विद्या के गूढ़ मर्म को सीखने लगा।

राजघराने से जब वह मूर्ख ब्राह्मण चला गया तब राजकन्या के चित्त में कुछ सन्तोष हुआ।

थोड़े दिन के बाद वह ब्राह्मण पढ़ लिख कर ऐसा विद्वान् हुआ जिसकी कीर्ति आज देश-देशान्तर में छाई हुई है। जब वह पूर्ण विद्वान् हो गया तब अपने घर पर आया और दर्वाजे पर आकर कहने लगा कि "कपाटावुद्घाटय"— किवाड़ खोलो। राजकुमारी उस समय किसी कार्य में सलग्न थी। आवाज सुनते ही समझ गई कि मेरा पति आया है, यह आवाज उसी की है। तब उसने भीतर से

कहा कि "अस्ति कश्चिद्वाग्विशेष"—क्या तुम्हारी वात चीत मे कुछ परिवर्तन हो गया है, क्या तुम कोई विद्या सीख कर आये हो ?

जब स्त्री-पुरुष दोनों की परस्पर वातचीत हुई तब चम्पककलिका को मालूम हो गया कि मेरा पति तो अद्वितीय विद्वान् हो कर आया है। वह हाथ जोड कर सामने खडी हुई और अपने अपराध की क्षमा चाहने लगी। उसने कहा—महाराज! मेरे अपराध को क्षमा कीजिए। मैंने आप के साथ वह पाप किया है जो कोई भी स्त्री अपने पति के साथ नहीं कर सकती। अब मेरा इसी में निस्तार है कि आप मेरे अपराध को क्षमा कर दें। ब्राह्मण ने कहा—इसमें तेरा कोई अपराध नहीं, तूने मेरे जन्म को सार्थ कर दिया। यदि मेरे साथ तेरा कठोर वर्ताव न होता तो मैं जन्म भर मूर्ख ही वना रहता। तेरी ही कृपा से मैंने विद्या सीखी है। इसके लिए मैं तेरा आजन्म उपकार मानूँगा।

अन्त में वे दोनों स्त्री-पुरुष आनन्द के साथ अपने गृहस्थाश्रम को व्यतीत करने लगे। जब तक संसार में रहे—आनन्दपूर्वक अपने जीवन को विताया।

विद्या पढ कर घर आने पर [illegible] अपनी स्त्री से कहा था कि किवाड [illegible] उस [illegible] उसकी स्त्री ने कहा था [illegible] ने तीन

ऐसे काव्य बनाये हैं जिनका प्रचार देश-विदेश में आज तक हो रहा है। और जब तक पठन-पाठन का विचार बना रहेगा तब तक कालिदास के पुस्तकों की इज्जत बनी रहेगी। 'अस्ति' शब्द को लेकर "कुमारसम्भव" काव्य बनाया, जिसके पहले श्लोक में कविराज ने 'अस्ति' शब्द रक्खा है, 'कश्चित्' शब्द लेकर 'मेघदूत' बनाया जिसके प्रारम्भ के श्लोक में 'कश्चित्' शब्द रक्खा है और 'वाक्' शब्द लेकर कविराज ने महाकाव्य 'रघुवंश' रचा। रघुवंश का अनेक भाषाओं में अनुवाद हो गया है। आज कल कालिदास के काव्य-ग्रन्थों की बड़ी प्रशंसा है। वास्तव में कालिदास कविशिरोमणि थे। उन्होंने अपना नाम विद्या पढ़-लिख कर ही कालिदास रक्खा था।

राजा भोज को जब इनकी विद्वत्ता का हाल मालूम हुआ तब उसने इनको अपनी सभा में बुलवाया और इनसे बातचीत करके इतना प्रसन्न हुआ कि इनको बड़े आदर के साथ अपनी सभा का सर्वोपरि पण्डित मान कर रक्खा और दानमान से इनकी बड़ी प्रतिष्ठा की। राजा भोज कवि कालिदास के बराबर किसी कवि को न मानते थे। ये सदा इनको अपने साथ रखते और इनसे बातचीत करके प्रसन्न होते थे। कवि कालिदास के बराबर कवि होना मुश्किल है। इस समय तक इनके समान कोई कवि नहीं हुआ।

इति।